# मार्क्स और मार्क्सवाद

मजदूर वर्ग की क्रांतिकारी वैज्ञानिक विचारधारा मार्क्सवाद के संस्थापक कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंगेल्स थे। इस वर्ष (2018) कार्ल मार्क्स के जन्म के 200 वर्ष पूरे हो रहे हैं। इसके साथ ही इस वर्ष कम्युनिस्ट घोषणापत्र के 170 वर्ष भी पूरे हो रहे हैं। कम्युनिस्ट घोषणापत्र के जरिये ही वैज्ञानिक समाजवाद के विचारों की मुकम्मल क्रमबद्ध घोषणा विश्व इतिहास के रंगमंच पर हुई थी।

पिछले 170 वर्षों में अपनी क्रांतिकारी विचारधारा से लैस होकर सर्वहारा वर्ग ने कई सफल-असफल क्रांतियों का नेतृत्व किया। इस प्रक्रिया में उसने अपनी विचारधारा को और अधिक उन्नत और विकसित भी किया। आज मार्क्सवाद विकसित होकर मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा के स्तर तक पहुंच चुका है।

मजदूर वर्ग के महान शिक्षक और नेता मार्क्स और एंगेल्स ने जब मार्क्सवाद के रूप में वैज्ञानिक समाजवाद के विचारों का प्रतिपादन किया तब मार्क्सवाद मजदूर आंदोलन में मौजूद कई विचारधाराओं में से एक था। मार्क्स-एंगेल्स ने अपने जीते जी मजदूर आंदोलन को वैज्ञानिक समाजवाद के विचारों पर खड़ा करने के लिए अनथक संघर्ष किया और इस काम में वे सफल भी रहे।

कार्ल मार्क्स की दूसरी जन्मशती के अवसर पर प्रस्तुत इस लेख में सबसे पहले हम मार्क्स के जीवन की संक्षिप्त चर्चा करेंगे। इसके पश्चात हम उस भौतिक व वैचारिक पृष्ठभूमि की चर्चा करेंगे जिसमें मार्क्स व एंगेल्स सर्वहारा की वैज्ञानिक विचारधारा को मार्क्सवाद के रूप में सूत्रित कर सके। इसके पश्चात हम मार्क्सवाद की प्रमुख बातों की चर्चा करते हुए मार्क्स-एंगेल्स द्वारा मजदूर आंदोलन में इसे स्थापित करने के लिए किये गये संघर्ष की बात करेंगे।

## I

कार्ल मार्क्स का जन्म 5 मई 1818 को पश्चिमी जर्मनी के राइन प्रदेश के त्रियेर नगर में हुआ था। फ्रांस की सीमा पर स्थित इस इलाके पर 1789 की फ्रांसीसी क्रांति का प्रभाव बाकी जर्मनी की तुलना में कहीं ज्यादा था। कार्ल मार्क्स के पिता हर्शल मार्क्स (बाद में हेनरिक मार्क्स) एक यहूदी वकील थे जिन्होंने 1824 में प्रोटेस्टेंट इसाई धर्म स्वीकार कर लिया था। मार्क्स की मां हेनरिटा प्रेसबुर्ग थीं।

मार्क्स का परिवार उदार विचारों का था, यहूदी कट्टरता का वहां नामोनिशान तक न था। जर्मनी में यहूदियों के प्रति भेदभाव ने उनके परिवार को यहूदी धर्म छोड़ने की ओर धकेला था। 1835 में मार्क्स ने अपनी जिम्नेजियम (हाईस्कूल) की पढ़ाई पूरी की। इसके बाद वे आगे की पढ़ाई के लिए 1835 में ही बोन विश्वविद्यालय में दाखिल हुए। बोन की पढ़ाई पसन्द न आने के चलते उसे छोड़ वे 1836 में बर्लिन विश्वविद्यालय पढ़ाई के लिए चले गये। बर्लिन में मार्क्स ने कानून और इतिहास व दर्शन का अध्ययन किया। 1841 में एपीक्यूरस के दर्शन पर शोध निबंध पेश कर उन्होंने अपनी पढ़ाई पूरी की। 1838 में पिता की मृत्यु के बाद मार्क्स ने कानून की पढ़ाई छोड़ दर्शन की ओर रुख कर लिया था।

बर्लिन यूरोप के दार्शनिक हेगेल (1770-1831) की कर्मभूमि थी। बर्लिन विश्वविद्यालय पर हेगेल के विचारों का प्रभाव उनकी मृत्यु के बाद तक बना रहा। बर्लिन में ही मार्क्स तरुण हेगेलपंथियों के प्रभाव में आये। हेगेल चूंकि प्रशा के राजतंत्र को आदर्श व्यवस्था घोषित करते थे इसलिए उन्हें राज्य का संरक्षण भी प्राप्त हुआ था। पर तरुण वामपंथी हेगेलवादी, हेगेल की तरह राजतंत्र के पुजारी नहीं थे। उन्होंने हेगेल के द्वन्द्ववाद का इस्तेमाल धर्म और राजनीति के क्षेत्र में करना शुरू किया। इसलिए राज्य के कोप का भी उन्हें शिकार होना पड़ा। ब्रूनो बावेर वामपंथी हेगेलवादियों के नेता थे।

राज्य की प्रतिक्रियावादी नीति का शीघ्र ही ब्रूनो बावेर शिकार बने। 1841 में उनसे बोन विश्व-विद्यालय में अध्यापन का अधिकार छीन लिया गया। इससे पहले फायरबाख के साथ भी ऐसा ही सलूक किया जा चुका था। ऐसी परिस्थिति में मार्क्स को प्रोफेसर बनने का ख्याल छोड़ देना पड़ा। और उन्होंने पत्रकारिता की ओर रुख किया। राइन प्रदेश के कुछ आमूलवादी बुर्जुआ लोग वामपंथी हेगेलवादियों से मिलता-जुलता रुख रखते थे। इन लोगों ने कोलोन में 'राइन समाचार पत्र' नामक अखबार निकालना शुरू किया। इस अखबार का पहला अंक 1 जनवरी 1842 को निकला। इन लोगों ने मार्क्स व ब्रूनो बावेर को इस अखबार का मुख्य लेखक बनाया। अक्टूबर 1842 में मार्क्स इस अखबार के मुख्य संपादक बन गये और बोन से कोलोन चले आये। मार्क्स के संपादन में पत्र के क्रांतिकारी-जनवादी झुकाव के चलते पत्र को शीघ्र ही सेंसर का सामना करना पड़ा। 1 जनवरी 1843 को पत्र को बंद कर दिया गया हालांकि मार्क्स पत्र को बचाने के लिए पहले ही संपादक का पद छोड़ चुके थे पर प्रतिक्रियावादी सरकारी रुख के चलते पत्र को बचाया नहीं जा सका।

1836 में ही फायरबाख धर्मशास्त्र की आलोचना शुरू कर भौतिकवाद की ओर मुड़ने लगे थे। 1841 में उनकी कृति 'ईसाई धर्म का सार' और 1843 में उनकी कृति 'भाववादी दर्शन की आधारभूत प्रस्थापनाएं' प्रकाशित हुईं। फायरबाख की इन कृतियों का मार्क्स समेत सभी वामपंथी हेगेलवादियों पर व्यापक प्रभाव पड़ा और वे भौतिकवाद की ओर मुड़ने लगे।

1843 में मार्क्स ने अपने बचपन की मित्र जेनी वेस्ट फालेन से विवाह कर लिया। उन दोनों की मंगनी पहले ही हो चुकी थी। जेनी प्रशा के एक प्रतिक्रियावादी अमीर घराने से थीं। उनका बड़ा भाई 1850-58 के प्रतिक्रियावादी दौर में प्रशा का गृहमंत्री था। पर जेनी पर अपनी पारिवारिक पृष्ठभूमि का कोई असर नहीं पड़ा था। वह मार्क्स से उम्र में 4 वर्ष बड़ी थीं और आजीवन मार्क्स के उद्देश्यों, कठिन जीवन परिस्थितियों की सहयात्री रहीं।

शादी के पश्चात मार्क्स आर्नोल्ड रूगे के साथ जर्मन-फ्रांसीसी वर्षपत्र को निकालने के उद्देश्य से पेरिस (फ्रांस) चले गये। इस वर्षपत्र का केवल एक ही अंक 1844 में निकल सका। इस वर्षपत्र को यद्यपि फ्रांसीसी लेखकों ने सहयोग नहीं दिया पर जर्मनी के हाइने, हरवेग, योहान, मोजेज हेस, एंगेल्स के लेख इसमें छपे। वर्षपत्र के क्रांतिकारी विचारों के चलते जर्मनी में इसको बड़ी संख्या में जब्त कर लिया गया। रूगे से मतभेदों व जर्मनी में वितरण की कठिनाई के चलते इसके आगे के अंक नहीं निकल सके। इस पत्र में मार्क्स के क्रांतिकारी विचार उनके लेखों में सामने आ चुके थे।

सितम्बर 1844 में फ्रेडरिक एंगेल्स के पेरिस आने पर मार्क्स व एंगेल्स गहरे मित्र बन गये। उनकी यह मित्रता आजीवन बनी रही। हालांकि 1842 में कोलोन में दोनों की मुलाकात हो चुकी थी पर तब दोनों के बीच कोई घनिष्ठता कायम नहीं हो पायी थी।

1844 में ही मार्क्स और एंगेल्स ने मिलकर ब्रूनो बावेर सरीखे तरुण हेगेलपंथियों की आलोचना पर एक पुस्तक लिखने का निर्णय लिया। यह पुस्तक 1845 में 'पवित्र परिवार' के नाम से प्रकाशित हुई। इसके बाद आधुनिक जर्मन दर्शन के फायबाख, बावेर, स्टीर्नर की आलोचना व जर्मन समाजवाद की विभिन्न धाराओं की आलोचना करते हुए मार्क्स-एंगेल्स ने 'जर्मन विचारधारा' नामक पुस्तक लिखी। ये दोनों ही पुस्तकें मार्क्स के दार्शनिक तौर पर तरुण हेगेलपंथ से आगे बढ़ कर मूलतः नये विचार द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी दर्शन पर पहुंचने को दिखलाती हैं।

पेरिस क्रांति व समाजवाद की भूमि था। यहां मार्क्स का परिचय फ्रांस के क्रांतिकारी गुटों से, उनके समाजवादी विचारों से हुआ। काल्पनिक समाजवादियों के विचारों के साथ ही फ्रांस की सभ्यता व फ्रांसीसी क्रांति का उन्होंने गहराई से अध्ययन किया। जनवरी 1845 में तमाम अन्य लोगों के साथ मार्क्स को भी प्रशा के दबाव में फ्रांस सरकार ने देश निकाले का हुक्म दे दिया। जहां कई लोगों ने सरकार में सांठ-गांठ कर खुद को राजभक्त साबित करना चाहा वहीं मार्क्स ऐसा कुछ भी करने को तैयार नहीं थे। जाहिर है कि अब तक वे समाजवाद व सर्वहारा की मुक्ति हेतु सामाजिक क्रांति में हिस्सा लेने का संकल्प ले चुके थे और इसके लिए हर परेशानी उठाने को तैयार थे। पेरिस छोड़ने के बाद मार्क्स ने ब्रुसेल्स को अपना अगला ठिकाना बनाया।

ब्रुसेल्स (बेल्जियम) में भी मार्क्स को चैन से रहने नहीं दिया गया। वहां पहुंचते ही उनसे इस शर्त पर हस्ताक्षर करा लिए गये कि वे बेल्जियम की राजनीति पर कुछ नहीं लिखेंगे। प्रशा सरकार बेल्जियम से मार्क्स को निष्कासित करने का दबाव लगातार बेल्जियम सरकार पर डाल रही थी। अंततः उस दबाव से बचने के लिए मार्क्स ने प्रशा की नागरिकता को त्याग दिया। ब्रुसेल्स में ही मार्क्स ने प्रूदों की पुस्तक 'दरिद्रता का दर्शन' का जवाब 'दर्शन की दरिद्रता' पुस्तक के जरिये दिया। इस पुस्तक में मार्क्स ने ऐतिहासिक भौतिकवाद को वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया।

1847 में इस पुस्तक साथ ही ड्वाशे ब्रुसेलेर जाइटुंग नामक अखबार के जरिये भी मार्क्स ने अपने विचारों को प्रसारित किया।

1847 की शुरुआत में मार्क्स और एंगेल्स एक गुप्त प्रचारकारी संगठन कम्युनिस्ट लीग (पहले न्यायी लीग) में शामिल हो गये। इस संगठन की शाखाएं इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, बेल्जियम आदि कई देशों में थीं। इसकी नवंबर 1847 को हुई दूसरी कांग्रेस में मार्क्स और एंगेल्स ने भाग लिया। दूसरी कांग्रेस के आदेश पर मार्क्स-एंगेल्स ने 'कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र' तैयार किया जिसका फरवरी 1848 में प्रकाशन हुआ। इस घोषणापत्र में सर्वहारा विश्व दृष्टिकोण द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के आधार पर वर्ग संघर्ष, पूंजीवादी समाज की आलोचना व कम्युनिस्ट समाज के सृष्टा के रूप में सर्वहारा वर्ग की विश्व ऐतिहासिक भूमिका को शानदार तरीके से प्रस्तुत किया गया।

इधर कम्युनिस्ट घोषणापत्र प्रकाशित हो रहा था तो ठीक उसी समय फ्रांस की फरवरी 1848 की पूंजीवादी क्रांति शुरू हो गयी। इस क्रांति के जरिये शोषित उत्पीड़ित जनता ने फ्रांस में बुर्जुआ राजतंत्र को उखाड़ फेंका। फ्रांस की इस क्रांति का प्रभाव शीघ्र ही पूरे यूरोप पर दिखाई पड़ने लगा। बेल्जियम में भी राजा के खिलाफ सुगबुगाहट शुरू हुई हालांकि पहले राजा ने सिंहासन छोड़ने का झांसा देकर और बाद में विद्रोहियों का दमन कर अपनी गद्दी बचाने में सफलता पाई। इस दमन का शिकार मार्क्स को भी होना पड़ा और उन्हें देश निकाला दे दिया गया। मार्क्स अब फिर से पेरिस आ गये। पेरिस में सफल क्रांति के बाद बनी अस्थायी सरकार ने उनका स्वागत किया। मार्च आते-आते क्रांति की लहर जर्मनी जा पहुंची। मार्क्स ने इस वक्त पेरिस में जर्मन मजदूरों को संगठित कर उनकी मांगें सूत्रित की और क्रांति में हिस्सा लेने के लिए उन्हें जर्मनी भेजा। बाद में वे खुद भी जर्मनी के कोलोन चले आये। यहां उन्होंने नौये राईनिशे जाइटुंग (नया राइन समाचार पत्र) निकालना शुरू किया। मार्क्स इस पत्र के प्रधान सम्पादक थे। जर्मन बुर्जुआ ने क्रांति में सर्वहारा वर्ग की पहलकदमी से भयभीत हो क्रांति से विश्वासघात कर लिया और वह प्रतिक्रांति की पांतों में जा खड़ा हुआ। उसने सामंती ताकतों से समझौता कर लिया। विजयी प्रतिक्रांति ने पहले तो मार्क्स पर मुकदमा चलाया पर मुकदमे में मार्क्स बरी कर दिये गये। इसके बाद मई 1849 में मार्क्स को जर्मनी से निर्वासित कर दिया गया। मार्क्स फिर से पेरिस चले आये।

इस बीच फ्रांस में भी राष्ट्रपति व संसद द्वारा 1848 की क्रांति के बाद कायम संवैधानिक व्यवस्था भंग हो चुकी थी। जून 1849 में जनता ने इसके विरोध में एक बड़ा प्रदर्शन किया जिसका बड़े पैमाने पर दमन किया गया। इस प्रदर्शन के पश्चात मार्क्स को एक बार फिर पेरिस से निर्वासित कर दिया गया। अब मार्क्स लंदन चले गये जहां वे अपनी मृत्यु तक रहे।

1848-49 की इस महाद्वीपीय क्रांति में मार्क्स एक क्रांतिकारी की तरह दिलोजान से लगे रहे। क्रांतियों के विफल हो जाने के बाद उन्होंने इसका वैज्ञानिक मूल्यांकन किया। लंदन में उन्होंने कम्युनिस्ट लीग को दोबारा खड़ा करने में योगदान दिया। 1850 आते आते मार्क्स-एंगेल्स इस नतीजे पर पहुंच गये थे कि 1848 का तूफान थम चुका था। 1847 का औद्योगिक संकट जिसने 1848 की क्रांतियों की राह दिखलायी थी अब दूर हो चुका था व औद्योगिक समृद्धि का काल शुरू हो गया था। अपने इस मूल्यांकन पर खड़े होकर मार्क्स-एंगेल्स पुनः अगला तूफान आने तक क्रांति की तैयारी स्वरूप सैद्धान्तिक कर्म की ओर मुड़ गये। पर लीग के बाकी नेता लुई ब्लां, माज्जिनी, रूगे आदि मार्क्स-एंगेल्स के मूल्यांकन से सहमत नहीं थे। वे सभी क्रांति की रचना करने के दुस्साहसिक काम में जुट गये। मार्क्स-एंगेल्स ने क्रांति की रचना करने के इस खेल में भाग लेने से इनकार कर दिया। परिणामतः लीग में फूट पड़ गयी। जर्मनी के तमाम लीग के नेता राजद्रोह के आरोप में गिरफ्तार कर लिये गये जिन पर कोलोन का मुकदमा चला, कड़ी सजाएं दी गयीं। इसके पश्चात लीग को भंग कर दिया गया। 1848-51 की फ्रांसीसी क्रांति का वैज्ञानिक सारसंकलन करते हुए 1852 में मार्क्स ने 'लुई बोनापार्त की अठारहवीं ब्रूमेर' नामक लेखों की एक शृंखला वेडमेयर के अखबार के लिए लिखी जो बाद में स्वतंत्र रचना के बतौर प्रकाशित हुई।

मार्क्स ने लंदन में एक नये मासिक पत्र नोये राइनिशे रिव्यु की स्थापना की। इस पत्रिका के कुल 6 अंक ही निकल पाये। अब मार्क्स ने अपना ध्यान  राजनीतिक अर्थशास्त्र के अध्ययन में लगाया।

लंदन में मार्क्स का प्रवास घोर आर्थिक कठिनाईयों से भरा हुआ था। एंगेल्स उनकी नियमित तौर पर आर्थिक सहायता करते रहते थे। 1848 में मार्क्स की चौथी संतान के रूप में पुत्र पैदा हुआ जो एक वर्ष बाद ही गरीबी के चलते मर गया। कई दफे मार्क्स को घर की चीजें बंधक रखकर गुजारा चलाना पड़ा। कठोर आर्थिक कठिनाइयों के बावजूद मार्क्स रोज लगातार दस घंटे तक ब्रिटिश म्यूजियम के पुस्तकालय में अध्ययन करते। इसके बाद वे न्यूयार्क ट्रिब्यून नामक अखबार के लिए लेख लिख कुछ कमाने लगे।

इंग्लैण्ड औद्योगिक पूंजीवाद की उस समय प्रमुख भूमि थी। यहां के औद्योगिक सर्वहारा से मार्क्स का परिचय लंदन में रहने के दौरान हुआ। उन्होंने चार्टिस्ट आंदोलन के बचे हुए नेताओं से संपर्क स्थापित किया। राजनैतिक अर्थशास्त्र को उन्होंने पहले राजनीतिक अर्थशास्त्र की समीक्षा का एक प्रयास (1859) व बाद में पूंजी खंड 1 (1867) के जरिये क्रांतिकारी स्वरूप प्रदान किया।

1860 के दशक में मजदूर आंदोलन में फिर उभार आया। मार्क्स-एंगेल्स ने फिर से व्यावहारिक सरगर्मी में भाग लेते हुए विभिन्न देशों के मजदूर आंदोलन को एकताबद्ध करने का प्रयास शुरू किया। उनके प्रयासों से 28 सितम्बर 1864 को लंदन में पहले इंटरनेशनल अंतर्राष्ट्रीय मजदूर संघ की स्थापना हुई। मार्क्स ने इस संघ की पहली अपील, ढेरों प्रस्ताव व घोषणापत्र लिखे। यह इंटरनेशनल जब स्थापित हुआ तो मजदूर आंदोलन में ढेरों गैर सर्वहारा, प्राक् मार्क्सी समाजवाद के विभिन्न रूपों (माज्जिनी, प्रूदों, बाकूनिन, ब्रिटिश उदारवादी ट्रेड यूनियन आंदोलन, जर्मनी का लासाली दक्षिणपंथी ढुलमुलपन आदि) का प्रभाव मौजूद था। अगले कुछ वर्षों तक मार्क्स-एंगेल्स इन सभी मतों और पंथों से लड़ते हुए मार्क्सवाद को स्थापित करने में लगे रहे।

1871 में जब पेरिस की मेहनतकश जनता ने पेरिस कम्यून स्थापित किया तो उसकी काउंसिल में बड़ी मात्रा में ब्लांकी व प्रूदों के अनुयायी मौजूद थे। कम्यून की मार्क्स ने बहुमूल्य सलाहों से मदद की। 72 दिन बाद कम्यून को कुचल दिया गया। पेरिस कम्यून का क्रांतिकारी मूल्यांकन करते हुए मार्क्स ने इंटरनेशनल की जनरल काउंसिल के आगे जो भाषण दिया वह बाद में 'फ्रांस में गृहयुद्ध' पुस्तिका के रूप में प्रकाशित हुआ। पेरिस कम्यून के बाद इंटरनेशनल पर सरकारों का दमन काफी बढ़ गया। इस बीच बाकूनिनवादियों ने इंटरनेशनल में दरार डालने का काम किया। इन परिस्थितियों में 1872 की हेग कांग्रेस ने जनरल काउंसिल को न्यूयार्क स्थानांतरित कर दिया। 1876 में इसके समापन की घोषणा कर दी गयी।

1873 से ही मार्क्स को बीमारी ने घेर लिया। अगले कुछ वर्षों लगातार बीमारी से लड़ते हुए वे 'पूंजी' के समापन का प्रयास करते रहे। पर बीमारी ने उन्हें 'पूंजी' को पूरा नहीं करने दिया। 2 दिसम्बर 1881 को मार्क्स की पत्नी की मृत्यु हो गयी। 14 मार्च 1883 को मार्क्स की मृत्यु हो गयी।

मार्क्स के परिवार में उनके कई बच्चे लंदन के दिनों की घोर गरीबी में बचपन में ही मर गये। उनकी तीन बेटियां एल्योनेरा, लाऊरा, और जेनी ही बचीं रहीं।

मार्क्स सर्वोपरि एक क्रांतिकारी थे जिन्होंने न केवल सर्वहारा की मुक्ति के वैज्ञानिक विचारों का प्रतिपादन किया बल्कि वे आजीवन सर्वहारा की मुक्ति के वर्ग संघर्ष में जुटे रहे। आर्थिक परेशानियों में जीवन जीते हुए भी वे लगातार अपने लक्ष्य के प्रति हमेशा डटे रहे। कितनी ही सरकारों ने उन्हें देश निकाला दिया। उन्होंने लगातार जोश लगन उत्साह के साथ संघर्ष में हिस्सा लिया। उनके विचार उनके जीते जी शासकों को जितना भयभीत करते थे उतना ही उनकी मृत्यु के पश्चात भी शासकों को करते रहे। एंगेल्स ने उनकी समाधि पर भाषण देते हुए ठीक ही कहा था "उनका नाम युगों-युगों तक अमर रहेगा, वैसे ही उनका काम भी अमर रहेगा!"

मार्क्स के जीते जी जितने देशों के लोग उनके नाम से परिचित थे उससे कहीं ज्यादा आज दुनिया भर में उनके दिखाये रास्ते पर चल रहे हैं। आज दुनिया का शायद की कोई देश हो जहां मार्क्सवाद को स्वीकार कर संघर्ष करने वाले लोग न हों। उनका नाम और शिक्षाएं अमर हैं।

# II

सर्वहारा मुक्ति के वैज्ञानिक सिद्धान्तों को प्रतिपादित करने वाले मार्क्स-एंगेल्स निश्चय ही बेहद प्रतिभाशाली इंसान थे। लेकिन जैसा कि मार्क्सवाद हमें सिखलाता है कि हर प्रतिभाशाली व्यक्ति उसके द्वारा प्रस्तुत नया विचार कुछ निश्चित परिस्थितियों का उत्पाद होता है। कोई भी नया विचार निर्वात से उत्पन्न नहीं होता बल्कि अपने पूर्ववर्ती विचारों-परिस्थितियों पर ही आगे बढ़ता है। इसके साथ ही किसी व्यक्ति विशेष की महानता, उसकी उपलब्धियों को जिस समाज में वह पैदा हुआ उस समाज के सामाजिक रूपों, बौद्धिक विकास की स्थिति में अवस्थित कर ही समझा जा सकता है। खुद मार्क्स और मार्क्सवाद भी इन बातों का अपवाद नहीं है। मार्क्सवाद भी सामाजिक विकास की खास मंजिल में, वर्ग संघर्ष के एक खास स्तर तक पहुंचने और विभिन्न क्षेत्रों में वैचारिक विकास की खास स्थिति में ही पैदा हुआ।

18वीं सदी के अन्तिम दशकों से 19वीं सदी के मध्य तक यूरोपीय समाज कई गंभीर परिवर्तनों से गुजरा। यह काल उत्तरी-पश्चिमी यूरोप में पूंजीवाद के तीव्र विकास का काल था। उत्तरी अमेरिका भी इस समय तेजी से पूंजीवादी विकास कर रहा था। यूरोप में ब्रिटेन पूंजीवादी विकास में अग्रणी था। व्यापारिक पूंजीवाद को पीछे छोड़ औद्योगिक पूंजीवाद अपनी वरीयता साबित करता जा रहा था। उपरोक्त देशों में न केवल पूंजीवादी उत्पादन सम्बन्धों की प्रधानता होती जा रही थी बल्कि पूंजीपति वर्ग की राजनीति में भूमिका व हस्तक्षेप बढ़ता जा रहा था। हालांकि अधिकांश जगह 19वीं सदी के मध्य तक सामंती ताकतें ही राजसत्ता पर काबिज थीं पर अब वे पूंजीवादी उत्पादन सम्बन्धों की बढ़ती के साथ तालमेल बिठा ही सत्ता कायम रख पा रहीं थीं।

इन परिवर्तनों के पीछे इस काल की दो प्रमुख क्रांतियों की महत्वपूर्ण भूमिका थी। पहली औद्योगिक क्रांति जो 1760 से शुरू होकर 19वीं सदी के शुरुआती दो-तीन दशकों तक जारी रही थी। दूसरी 1789-99 की फ्रांसीसी क्रांति जिसने आगे तमाम देशों में बुर्जुआ जनवादी क्रांति की राह प्रशस्त की। पहली जहां ब्रिटेन में केन्द्रित थी वहीं दूसरी फ्रांस में सम्पन्न हुई। इन दोनों ही क्रांतियों का प्रभाव एक देश तक सिमटा नहीं था बल्कि दुनिया भर के ढेरों देशों में इनके प्रभाव को महसूस किया गया। पहली क्रांति ने जहां औद्योगिक पूंजी की वरीयता, पूंजीवादी उत्पादन सम्बन्धों के व्यापक होते जाने में मदद की वहीं दूसरी क्रांति ने सामंती राजसत्ता को चुनौती दी, बुर्जुआ वर्ग का सत्ता व राजनीति में हस्तक्षेप बढ़ाया।

औद्योगिक क्रांति ने मानव समाज की उत्पादक शक्तियों पर लगी बेड़ियों को एक झटके में तोड़ दिया। उत्पादक शक्तियों के तीव्र विकास ने आधुनिक मशीनों पर आधारित उद्योगों की नींव डाली। औद्योगिक क्रांति से पूर्व ब्रिटेन में मैन्युफैक्चरिंग के तहत पूंजीवादी उत्पादन हो रहा था। दस्तकारी के दौर के उस्ताद-शागिर्द के सम्बन्ध मैन्युफैक्चरिंग के काल में पूंजीपति-मजदूर के सम्बन्धों में बदल चुके थे। मैन्युफैक्चरिंग के तहत अब एक छत के नीचे 100-200 लोग श्रम विभाजन करके उत्पादन कर रहे थे। लेकिन अभी भी उत्पादन हाथों के जरिये ही किया जाता था। इस तरह उत्पादन बगैर मशीनों के पूंजीवादी उत्पादन हो रहा था। अठारहवीं सदी के मध्य तक औद्योगिक क्रांति की शुरुआत के साथ एक के बाद एक मशीनों का आविष्कार होना शुरू हुआ। उत्पादन प्रक्रिया में मशीनों के प्रयोग ने मैन्युफैक्चरिंग के तहत उत्पादन को आधुनिक फैक्टरी तक पहुंचा दिया। सबसे पहले मशीनों का प्रयोग ब्रिटेन में उस समय के सबसे महत्वपूर्ण उद्योग टेक्सटाइल उद्योग में हुआ। एक के बाद एक आविष्कारों ने बुनने व कातने की तकनीक को एक झटके में बदल डाला। 1785 में भाप के इंजन के आविष्कार के बाद उत्पादन में भाप की शक्ति का इस्तेमाल संभव हो गया। उत्पादन में भाप की शक्ति के प्रयोग ने उद्योग की कई अन्य शाखाओं को पैदा किया। खासकर मशीनों को बनाने वाले उद्योगों का तेजी से विस्तार हुआ।

एक के बाद एक हुए आविष्कारों की मदद से मशीन आधारित आधुनिक उद्योगों में उत्पादन के संकेन्द्रण ने पुरानी दस्तकारी पर आधारित उत्पादन की कमर तोड़ दी। मैन्युफैक्चरिंग के तहत हाथों से होने वाला उत्पादन भी आधुनिक उद्योगों के सामने टिक नहीं पाया। आधुनिक फैक्टरी प्रणाली ने एक झटके में सभी प्राक् पूंजीवादी उत्पादन प्रणाली को ध्वस्त कर डाला। अब 16वीं-17वीं शताब्दी के मजदूरों से भिन्न आधुनिक फैक्टरी प्रणाली के तहत औद्योगिक सर्वहारा पैदा होने लगा। जहां 18वीं शताब्दी की शुरुआत में ब्रिटेन में मजदूरों की तादाद कुल आबादी के सापेक्ष बेहद कम थी वहीं 18वीं सदी के अंत व 19वीं सदी की शुरुआत में आबादी का एक ठीक ठाक हिस्सा मजदूर वर्ग का हिस्सा बन चुका था। इस तरह औद्योगिक क्रांति के साथ औद्योगिक सर्वहारा भी पैदा हुआ जिसने अपने समय के सामाजिक सम्बन्धों पर असर डालना शुरू किया। दस्तकारी के दौर के उस्ताद-शागिर्द के सम्बन्धों को अब निर्णायक तौर पर पूंजीपति-मजदूर के सम्बन्ध में बदल डाला गया।

औद्योगिक क्रांति के साथ सूती वस्त्र उद्योग, लोहा उद्योग व बाद मे रेलवे के क्षेत्र में उत्पादन में तेज प्रगति हुई। उत्पादन में हुई इस तीव्र वृद्धि ने ब्रिटिश मालों के वैश्विक व्यापार में तेज वृद्धि पैदा की। अब ब्रिटेन दुनिया भर से कच्चा माल बटोर उन्हें तैयार माल बेचने वाला देश बन गया। व्यापार की इस बढ़ती से वैश्विक बाजार पैदा हुआ और ब्रिटेन दुनिया की वर्कशॉप बन गया।

औद्योगिक क्रांति ब्रिटेन तक सीमित नही रही। इसका प्रभाव विश्वव्यापी था। उत्तरी अमेरिका व पश्चिमी यूरोप के देशों ने धीरे-धीरे ब्रिटेन का अनुसरण किया और वहां भी आधुनिक फैक्टरियां स्थापित होने लगीं। आधुनिक उद्योगों की स्थापना ने और व्यापार की बढ़ती से पूंजीपति वर्ग की हैसियत काफी तेजी से बढ़ी। अब वह लाखों-करोड़ों में खेलने वाला आधुनिक औद्योगिक बुर्जुआ बन गया। जहां पहले धनवान सामन्तों के सामने बुर्जुआ कुछ खास औकात नहीं रखता था अब औद्योगिक क्रांति के बाद एक वर्ग के बतौर

बुर्जुआ वर्ग अर्थव्यवस्था में प्रमुख भूमिका निभाने लगा। इसने बुर्जुआ वर्ग को राजनीति में भी सामन्तों को पीछे ढकेल मुख्य भूमिका अपनाने की ओर बढ़ाया।

इस तरह औद्योगिक क्रांति ने पश्चिमी यूरोप के पूंजीवादी रूपान्तरण की प्रक्रिया को एक झटके में तेज कर दिया। इसने आधुनिक उद्योगों को स्थापित किया। इसने औद्योगिक पूंजीपति वर्ग और उसके प्रतिध्रुव आधुनिक सर्वहारा वर्ग को पैदा किया। ये दोनों ही बाकी पुराने वर्गों को पीछे ढकेल इतिहास के रंगमंच पर प्रमुख वर्गों के बतौर आमने सामने आ कर खड़े होने लगे। इस आधुनिक सर्वहारा वर्ग के पैदा हुए बगैर उसकी विचारधारा मार्क्सवाद नहीं पैदा हो सकती थी।

अगर औद्योगिक क्रांति ने 19वीं सदी की पश्चिमी यूरोप की अर्थव्यवस्था को गहरे ढंग से प्रभावित किया तो इसकी राजनीति व विचारधारा को फ्रांसीसी क्रांति ने प्रभावित किया। हालांकि फ्रांसीसी क्रांति से पहले हॉलैण्ड, इंग्लैण्ड, अमेरिका में बुर्जुआ जनवादी क्रांतियां हो चुकीं थीं। पर इनमें से कोई भी फ्रांसीसी क्रांति सरीखी आमूल-चूल परिवर्तन वाली नहीं थी। इस क्रांति का प्रभाव न केवल यूरोप बल्कि पूरी दुनिया में महसूस किया गया।

फ्रांसीसी क्रांति 1789 में शुरू हुई। 1793 में यह अपने चरम पर पहुंची और 1794 से इसमें उतार शुरू हुआ। 1799 में नेपोलियन के सत्ता पर कब्जे के साथ यह समाप्त हुई। 1793 की अपनी चरम अवस्था में इसने सामन्तवाद का पूरी तरह सफाया कर दिया। बुर्जुआ वर्ग के साथ शहरी गरीबों और किसानों के जनउभार के साथ 1789 में यह क्रांति शुरू हुई। अपने पहले चरण में 1791 तक इसका नेतृत्व बुर्जुआ वर्ग के उदार हिस्से ने किया जिसने संवैधानिक राजतंत्र की व्यवस्था के तहत अपने हितों में कई सुधार किये। इसके बाद क्रांति का नेतृत्व ज्यादा क्रांतिकारी जैकोबिनों के हाथों में आ गया। जिन्होंने राजतंत्र के खात्मे व गणतंत्र की स्थापना का काम किया। उन्होंने सामन्तवाद का पूर्ण सफाया कर दिया। 1794 से क्रांति ने पीछे लौटना शुरू किया। इस काल में बाब्यूफ (मेहनतकश दस्तकारों का प्रतिनिधि) ने विद्रोह कर सत्ता हासिल करनी चाही पर उसका विद्रोह कुचल दिया गया। अंत में नेपोलियन के उभार के साथ क्रांति समाप्त हुई।

फ्रांसीसी क्रांति ने पूरे यूरोप में सामंती व्यवस्था के लिए खतरे की घंटी बजा दी। जहां-जहां नेपोलियन की सेनायें गयीं उन सब जगहों पर क्रांति का प्रसार हुआ। स्पेन-इटली, बेल्जियम-हॉलैण्ड, स्वीट्जरलैण्ड, पश्चिमी जर्मनी में फ्रांसीसी सेनाओं ने इस क्रांति को प्रसारित किया। इन सब जगहों में बुर्जुआ सुधारों की राह खुली। प्रशा का राइन प्रान्त जहां मार्क्स का जन्म हुआ, भी इस क्रांति के प्रभाव में बाकी जर्मनी से कहीं अधिक पूंजीवादी हो चुका था।

इस क्रांति के प्रभाव में बुर्जुआ वर्ग द्वारा राजसत्ता पर कब्जे के लिए बुर्जुआ जनवादी क्रांतियों की शृंखला शुरू हो गयी। 1815 में नेपोलियन की सेनाओं की पराजय से लेकर 1848 तक एक के बाद एक जनवादी क्रांतियां होनी शुरू हुईं। क्रांतियों की पहली शृंखला 1820-24 के दौरान हुई। इस दौरान स्पेन (1820), नेपल्स (1820) व ग्रीस (1821) में क्रांतियां शुरू हुईं। जहां पहले दोनों जगह क्रांतियां कुचल दी गयीं वहीं ग्रीस में क्रांति एक दशक तक चलने के बाद ऑटोमन साम्राज्य से ग्रीस को मुक्त करने में सफल रही। स्पेन की क्रांति ने लातिन अमेरिका के स्पेनिश कब्जे वाले क्षेत्रों ग्रेट कोलंबिया (कोलंबिया, वेनेजुएला, इक्वाडोर), अर्जेन्टीना, चिली, पेरू में स्वतंत्रता संग्राम को तेज किया। 1821 में मेक्सिको तो 1822 में ब्राजील आजाद हो गया।

क्रांतियों की दूसरी शृंखला (1829-34) ने यूरोप को कहीं ज्यादा गहरे ढंग से प्रभावित किया। 1815 में नेपोलियन की हार के बाद फ्रांस में बुर्बो राजतंत्र की स्थापना हो गयी थी। 1830 की क्रांति में फ्रांसीसी बुर्बो राजतंत्र को उखाड़ फैंका गया। हालांकि इसके बाद गणतंत्र की जगह लुईस फिलिप के नेतृत्व में संवैधानिक राजतंत्र कायम हुआ। फिर भी 1830 की फ्रांसीसी क्रांति ने यूरोप के कई देशों की जनता को जगा दिया। बेल्जियम 1830 में स्वतंत्र हो गया। पोलैण्ड में मुक्ति संघर्ष तेज हो उठा। स्पेन व पुर्तगाल में उदारवादी लोगों व दक्षिणपंथी लोगों के बीच गृहयुद्ध छिड़ गया। आयरलैण्ड में ब्रिटेन से मुक्ति का संघर्ष तेज हो गया।

1830 की क्रांतियां यूरोपीय समाज को 1848 की महाद्वीपीय क्रांति की ओर ले गयीं। 1848 में फ्रांस से शुरू होकर एक के बाद एक देश क्रांति की चपेट में आ गये। इस क्रांति में मजदूर वर्ग कई जगह मुख्य लड़ाकू शक्ति था। मजदूर वर्ग ने अपने को ब्रिटेन व फ्रांस में स्वतंत्र ताकत के बतौर प्रदर्शित करना शुरू किया।

इस तरह 1789 की फ्रांसीसी क्रांति ने 19वीं सदी में समूचे यूरोप में क्रांतियों को पैदा किया। सामन्तवाद के लिए 1789 में बजी खतरे की घंटी अगली सदी में पूरे यूरोप में सुनाई देने लगी। इन क्रांतियों ने नये पैदा हो रहे सर्वहारा वर्ग को स्वतंत्र ताकत के बतौर इतिहास के रंगमंच पर अपनी भूमिका के लिए तैयार किया। इन क्रांतियों ने सर्वहारा और पूंजीपति वर्ग के अलग-अलग हितों-रास्तों को सामने ला दिया। सर्वहारा वर्ग के एक स्वतंत्र शक्ति के बतौर सामने आये बगैर उसके हितों को उद्घोषित करने वाली उसकी विचारधारा मार्क्सवाद विकसित नहीं हो सकती थी।

आधुनिक मशीन आधारित उद्योगों में न केवल मजदूरों से 16-18 घंटे काम लिया जाता था बल्कि महिलाओं-बच्चों को भी इन उद्योगों में काम के लिए खींच लिया गया। खासकर सूती वस्त्र उद्योग में महिलाओं-बच्चों की तादाद बहुत ज्यादा थी। नई मशीनों के उपयोग ने मजदूरों के जीवन में बेहतरी के बजाय उनके शोषण में बढ़ोत्तरी के साधन का काम किया। ऐसे में मजदूरों की ओर से प्रतिरोध होना स्वाभाविक था।

शुरुआती संघर्ष में मजदूरों ने मशीन तोड़ने का आंदोलन चलाया। अभी मजदूरों में बेहद कमजोर चेतना थी व संघर्ष के परिप्रेक्ष्य का अभाव था। लुडाइट मशीन तोड़क संघर्ष 1810-11 में ब्रिटिश टेक्सटाइल मिलों में स्वत:स्फूर्त विस्फोट के रूप में सामने आया। हालांकि ब्रिटेन में यूनियनें 1752 के आसपास ही बनने लगी थीं पर वे अधिकतर कुशल मजदूरों तक सीमित थीं। 1818-20 के आसपास

ही ब्रिटेन में सभी मजदूरों को समेटने वाली सामान्य ट्रेड यूनियनें अस्तित्व में आना शुरू हुईं। मजदूरों के शुरुआती संघर्षों को कड़े पुलिसिया दमन का शिकार होना पड़ा। राष्ट्रीय स्तर पर मजदूरों की यूनियन बनाने का काम काल्पनिक समाजवादी राबर्ट ओवेन के नेतृत्व में 1830 के दशक में चला। 1830 में ब्रिटेन में राष्ट्रीय स्तर की मजदूर यूनियन अस्तित्व में आयी। इसी समय मजदूरों की कोआपरेटिव बनाने का काम भी शुरू हुआ।

1837 में ब्रिटेन में चार्टिस्ट आंदोलन के रूप में मजदूरों का पहला व्यापक राजनैतिक रूप से संगठित आंदोलन शुरू हुआ। इस आंदोलन के 6 सूत्री मांग पत्र में स्त्री-पुरुषों के लिए सार्वत्रिक मताधिकार, समान संसदीय निर्वाचन क्षेत्र, वार्षिक संसद, संसद सदस्यों के लिए वेतन, गुप्त मतदान, संसद सदस्यों के लिए सम्पत्ति की बाध्यता में खात्मे सरीखी राजनैतिक मांगें उठायी गयीं। 50 लाख हस्ताक्षरों के साथ, अपने अखबार के साथ यह मजदूरों का व्यापक आंदोलन बन गया था। 1850 में आंदोलन यद्यपि असफल हो गया पर यह मजदूर वर्ग के स्वतंत्र गतिविधि के लिए परिपक्व हो जाने का प्रमाण था। यह उसके स्वतंत्र वर्ग शक्ति के रूप में उभरने का संकेत था। यूरोप के अन्य देशों में भी मजदूरों के संघर्ष इस वक्त बढ़ती पर थे। 1848 की क्रांतियों में तो मुख्य लड़ाकू शक्ति मजदूर ही थे।

सर्वहारा वर्ग के इतिहास के रंगमंच पर स्वतंत्र वर्ग शक्ति के रूप में सामने आने का विश्व ऐतिहासिक महत्व था। केवल इन्हीं परिस्थितियों में उसकी विचारधारा उत्पन्न हो सकती थी।

इस तरह पूंजीवादी उत्पादन सम्बन्धों की बढ़ती बुर्जुआ वर्ग का राजनीति में बढ़ता हस्तक्षेप, सर्वहारा वर्ग का स्वतंत्र वर्ग शक्ति के रूप में सामने आने ने वो भौतिक परिस्थितियां तैयार कीं जिनमें सर्वहारा वर्ग की वैज्ञानिक विचारधारा पैदा हो सकती थी।

## III

सर्वहारा के दर्शन और विचारधारा का विकास अपनी पूर्ववर्ती विचारधाराओं के तार्किक संश्लेषण के साथ हुआ।

आधुनिक युग की शुरुआत पुनर्जागरण काल (14वीं-17वीं शताब्दी) की शुरुआत से मानी जाती है। इटली से शुरू होकर पुनर्जागरण समूचे यूरोप में फैल गया। इस काल की मुख्य विशेषता ग्रीक व रोमन साहित्य का अनुशीलन थी। इस काल में कला साहित्य-संस्कृति से लेकर विज्ञान के क्षेत्र में कई उपलब्धियां हासिल की गयीं। इस काल में लियोनार्दो दा विंसी सरीखे बहुप्रतिभा वाले व्यक्ति पैदा हुए। पुनर्जागरण काल में ही यूरोप में धर्म सुधार आंदोलन (15वीं-16वीं शताब्दी) पैदा हुआ जिसने कैथोलिक इसाई धर्म की गलत परम्पराओं, चर्च के भ्रष्टाचार के खिलाफ संघर्ष किया। इसने नवोदित मध्य वर्ग के हितों को अभिव्यक्त किया।

सामन्तवाद से अपने संघर्ष में बुर्जुआ वर्ग ने शुरुआत में धर्म की नयी अपेक्षाकृत उदार शाखाओं का सहारा लेकर जनता को अपने पीछे लामबंद किया। फिर भी बुर्जुआ वर्ग को अपनी बढ़ती के लिए विज्ञान के विकास में सहयोग करना पड़ा। इसाई धर्म के ढेरों धार्मिक पूर्वाग्रहों को चुनौती देने का काम 15-16-17वीं शताब्दी में यांत्रिकी के वैज्ञानिकों कॉपरनिकस, ब्रूनो, गैलिलियो और फ्रांसिस बेकन ने किया। इनके द्वारा विज्ञान के क्षेत्र में की गयी प्रगति ने ही दर्शन के क्षेत्र में बुर्जुआ वर्ग के यांत्रिक भौतिकवादी दर्शन के विकास के लिए आधार का काम किया। पुनर्जागरण काल ने बाद के प्रबोधन काल (17वीं-18वीं शताब्दी) के दार्शनिकों-चिंतकों के पैदा होने के लिए आधार मुहैय्या कराया।

17वीं-18वीं शताब्दी के प्रबोधन काल के महान दार्शनिक, राजनैतिक चिन्तकों ने बुर्जुआ क्रांतियों की वैचारिक पृष्ठभूमि तैयार करने के साथ मार्क्सवाद के विकास के लिए भी आधार मुहैय्या कराया। इन्होंने मूलतः बुर्जुआ वर्ग की विचारधारा को अभिव्यक्त किया। सामन्ती काल के रिवाजों-परम्पराओं को चुनौती देते हुए इन्होंने तर्क और स्वतंत्रता की वकालत की। सभी सामाजिक सम्बन्धों को तर्क, न्याय, स्वतंत्रता के आधार पर कायम किये जाने की जरूरत को इन्होंने पेश किया। इन्होंने धर्म की रूढ़िवादिता, पैदाइश के आधार पर श्रेणीक्रम आदि को चुनौती देते हुए प्रकृति प्रदत्त अधिकारों की वकालत की। इंग्लैण्ड में जान लॉक, फ्रांस में वाल्तेयर-मान्तेस्क्यू, अमेरिका में पैने, फ्रेंकलिन जैफरसन अपने-अपने देशों में बुर्जुआ क्रांतियों के लिए वैचारिक प्रस्तोता थे। जहां इंग्लैण्ड की क्रांति में बुर्जुआ वर्ग धर्म व सामंती तत्वों से सांठ-गांठ कर आगे बढ़ने को उत्सुक था वहीं फ्रांसीसी क्रांति के विचारक रोमन कैथोलिक धर्म, सामन्ती अभिजातों से निर्णायक संघर्ष के प्रस्तोता थे।

बुर्जुआ वर्ग के हितों के अनुरूप इन विचारकों ने स्वतंत्रता-समानता-भाईचारे या प्राकृतिक अधिकारों की बात की। पर इनकी स्वतंत्रता की परिभाषा में सम्पत्ति की स्वतंत्रता व व्यवसाय की स्वतंत्रता शामिल थी इसीलिए इनके लक्ष्यों में सभी मनुष्यों की आर्थिक समानता का लक्ष्य नहीं था उनका लक्ष्य अधिक से अधिक कुछ राजनैतिक अधिकारों की समानता था वो भी पूरी आबादी के लिए नहीं। बुर्जुआ क्रांतियों के साथ जो बुर्जुआ समाज अस्तित्व में आया वो कहीं से भी अपने विचारकों की अच्छी लगने वाली बातों के अनुरूप नहीं था।

जिन तीन अलग-अलग देशों में ज्ञान के तीन क्षेत्रों में हुए विकास ने मार्क्सवाद के तीन स्रोतों का काम किया, वे हैं-जर्मन दर्शन, आंग्ल अर्थशास्त्र और फ्रांसीसी समाजवाद।

17वीं-18वीं शताब्दी में इंग्लैण्ड के फ्रांसिस बेकन से शुरू करके थामस हॉब्स, फ्रांस के दीदेरो, हाल्बाख, हेल्वेतियस ने यांत्रिक भौतिकवाद को आगे बढ़ाया। इन भौतिकवादियों का सकारात्मक पक्ष यह था कि इन्होंने खुद को विज्ञान की खोजों पर आधारित किया। पदार्थ और चेतना में ये पदार्थ को प्राथमिक मानते थे। वे मानते थे कि मनुष्य का आत्मिक संसार उसके परिवेश का फल है। यहीं से

उनकी समस्त प्रगतिशील सोच पैदा होती थी कि अगर मनुष्य के चरित्र के दोषों को दूर करना है तो यह उपदेशों के बजाय उसके सामाजिक परिवेश को बदल कर किया जा सकता है।

परन्तु इन भौतिकवादियों की ढेरों सीमायें भी थीं। यह मूलतः अधिभूतवादी रुख अपनाता था। यह सभी चीजों को एक दूसरे से स्वतंत्र स्थिर अवस्था में देखता था। यह चीजों, प्रक्रियाओं में यांत्रिक परिवर्तन के अलावा अन्य किसी परिवर्तन से इन्कार करता था। विज्ञान में केवल यांत्रिकी के विकास ने इसकी यह सीमा बांध रखी थी।

खास तौर पर प्रकृति और इतिहास के क्षेत्र में यह हमेशा गलत निष्कर्षों तक पहुंचता था। मसलन मनुष्य समेत सभी जानवर आदिकाल से बने हुए हैं और हमेशा अपरिवर्तित रहते हैं, कि मनुष्य जाति के क्रमिक विकास जैसी कोई चीज नहीं हुई है। अगर चीजों, प्रक्रियाओं में कोई परिवर्तन होता भी है तो उसके लिए मुख्यतः वाह्य कारक ही जिम्मेदार होते हैं। मसलन वे यह स्वीकारते हैं कि मानव नस्लें जलवायु परिवर्तन से बदलती हैं। पर किसी भी आंतरिक परिवर्तन को वे संज्ञान में नहीं लेते। इतिहास के क्षेत्र में तो वे एकदम भाववादी निष्कर्षों तक पहुंचते रहे। यह मानने के बाद कि मनुष्य अपने परिवेश की उपज होता है के बाद वे शीघ्र ही इस निष्कर्ष पर पहुंचते रहे कि परिवेश सम्मतियों द्वारा निर्धारित होता है। विभिन्न कानूनों वाली अलग-अलग व्यवस्थायें केवल उन कानूनों को बनाने वालों के अलग विचारों का फल होती हैं। इस तरह सम्मतियां ही संसार पर शासन करती हैं। और इस तरह वे भाववादी निष्कर्ष तक पहुंच जाते थे।

यांत्रिक भौतिकवाद (फ्रांसीसी भौतिकवाद) के इस मत से एकदम अलग रुख की ओर 18-19वीं सदी का जर्मन दर्शन गया। जहां फ्रांसीसी भौतिकवादियों ने प्राचीन काल के ग्रीक विचारकों से भौतिकवाद ग्रहण किया वहीं जर्मन भाववादियों ने ग्रीक दार्शनिकों से द्वन्द्ववाद ग्रहण किया। जर्मन बुर्जुआ वर्ग की खास स्थिति ने उन्हें द्वन्द्ववाद को अपनाने की ओर धकेला।

जर्मनी में बुर्जुआ वर्ग अपने समकालीन फ्रांसीसी या ब्रिटिश बुर्जुआ की तुलना में कहीं अधिक कमजोर व समझौतापरस्त था। 15वीं शताब्दी के किसान आंदोलन की असफलता के बाद वह लम्बे समय तक सामंती तत्वों के खिलाफ संघर्ष नहीं कर सका। फ्रांसीसी क्रांति के जैकोबिन क्रांतिकारी काल ने उसे और डरपोक बना दिया था। इसलिए वह ढेरों मामलों में परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों का शिकार था। फ्रांसीसी क्रांति उसे आकर्षित भी करती थी पर वह उससे डरता भी था। वह प्रगतिशील भी था पर उग्र कार्यवाहियों का विरोधी भी था। वह सामंतों से लड़ना चाहता था पर उनसे समझौता भी कर लेता था। 1848 की क्रांति में तो सर्वहारा के आगे बढ़ने पर उसने अपनी ही क्रांति को दगा दे सामंतों से समझौता कर लिया।

जर्मन बुर्जुआ की इस परस्पर विरोधी स्थितियों ने जर्मन दर्शन में द्वन्द्ववादी रुख अपनाने में मदद की। खुद जर्मन दार्शनिकों की जीवन स्थितियों ने भी उन्हें इस ओर ढकेला। अधिकतर जर्मन दार्शनिक राज्य के कर्मचारी या प्रोफसर थे। उनके भौतिक हित उन्हें राजतंत्र की प्रशंसा करने की ओर धकेलते थे वहीं उनकी प्रगतिशीलता उन्हें उदारवादी रुख की ओर धकेलती थी।

अज्ञेयवादी कांट (1724-1804) ने भौतिकवाद और आध्यात्मवाद को मिलाने का प्रयास किया। उनका मानना था कि हमारी चेतना से स्वतंत्र वस्तुगत दुनिया का अस्तित्व है पर वह जैसी है उसे हम जान नहीं सकते। हम केवल इंद्रियों के जरिये ऊपरी रूप को जानते हैं सार को नहीं। कांट एक ओर विज्ञान के साथ खड़े होते हुए बाईबिल के उलट पृथ्वी व अन्य आकाशीय पिण्डों को क्रमिक विकास का परिणाम मानते हैं। वे सैद्धान्तिक तौर पर ईश्वर और आत्मा की अमरता आदि से इंकार करते हुए व्यवहार में मनुष्य की गतिविधियों को नैतिक आधार प्रदान करने के लिए उन्हें आवश्यक बताने लगते हैं। चेतना और पदार्थ (चेतना से बाहर की दुनिया) के बीच एक निरपेक्ष रुकावट खड़ी कर, पदार्थ के वास्तविक सार को जानने की संभावना से इन्कार कर कांट आत्मपरक भाववादी बन जाते हैं।

कांट के अज्ञेयवाद व आत्मपरक भाववाद के साथ फ्रांसीसी भौतिकवादियों के अधिभूतवाद को खारिज करते हुए हेगेल एक द्वन्द्ववादी के रूप में विकसित हुए। उनके अनुसार समस्त दुनिया या पदार्थ निरपेक्ष विचार या चेतना द्वारा सृजित है। हेगेल की दार्शनिक व्यवस्था में हर चीज, परिघटना लगातार गतिशील, विकास व परिवर्तन की प्रक्रिया में और दूसरी चीजों से परस्पर सम्बन्ध में मौजूद होती है। पर भौतिक जगत में होने वाली हर गति, परिवर्तन दरअसल विचारों में हो रहे द्वन्द्वात्मक परिवर्तनों का परिणाम होती है। चेतना में लगातार निचली अवस्था से ऊपरी अवस्था की ओर द्वन्द्वात्मक तरीके परिवर्तन होता है जिसके अनुरूप वाह्य जगत भी परिवर्तित होता जाता है। चेतना में यह परिवर्तन निरपेक्ष विचार की ओर ले जाता है।

कोई भी तर्क या विचार स्थिर अवस्था में नहीं रहता है बल्कि उसके भीतर परस्पर विरोधी दो विचार मौजूद होते हैं। इन दोनों में टकराव ही विचारों में गति या परिवर्तन को पैदा करता है। इन दो परस्पर विरोधी विचारों के टकराव से नया विचार उत्पन्न होता है जो अपनी बारी में फिर दो परस्पर विरोधी विचारों की ओर ले जाता है। इस तरह विचार, तर्क, चेतना में द्वन्द्वात्मक ढंग से परिवर्तन जारी रहता है। विचारों के इस सतत् परिवर्तन के चलते पदार्थ, परिघटनाओं में भी सतत् परिवर्तन होता रहता है।

जहां हीगेल का द्वन्द्वात्मक तरीका क्रांतिकारी था वहीं वे धर्म और प्रतिक्रियावादी प्रशा की राजसत्ता के समर्थक बन कर अपना प्रतिक्रियावादी चरित्र भी प्रस्तुत कर देते हैं। निरपेक्ष विचार को भौतिक जगत के समस्त परिवर्तनों का मूल स्रोत मानने की हीगेल की भाववादी धारणा को उनके ही एक अनुयायी फायरबाख ने चुनौती देकर भौतिकवाद की ओर वापसी सुनिश्चित की।

लुडविग फायरबाख (1804-1872) ने सवाल उठाया कि क्या वास्तव में निरपेक्ष विचार अपनी विकास प्रक्रिया में समस्त भौतिक जगत को निर्धारित करता है? इस प्रश्न का नकारात्मक उत्तर देते हुए फायरबाख कहा कि दरअसल भौतिक जगत, पदार्थ ही विचार, चेतना को निर्धारित करता है। एक समय था जब बगैर चेतना के भी पदार्थ का अस्तित्व था। इसाई धर्म की आलोचना करते हुए

फायरबाख ने कहा कि इसाई धर्म समेत ईश्वर से जुड़े सभी विचारों को इन्सान ने ही बनाया है न कि भगवान ने इन्सान को बनाया है। इस तरह फायरबाख ने फ्रांसीसी भौतिकवादियों की तरह इन्सान के हितों को अपने दर्शन का केन्द्रीय तत्व बना लिया।

फ्रांसीसी भौतिकवादियों की तरह फायरबाख भी इससे आगे बढ़कर यह देखने में असफल रहे कि समस्त मानवों के हित एक से नहीं हैं कि विभिन्न वर्गों के व्यक्तियों के हित अलग-अलग यहां तक कि परस्पर विरोधी तक हैं। जीव विज्ञान की दृष्टि से सारे मनुष्यों की बनावट भले ही एक हो पर सामाजिक सोपानक्रम में उनकी स्थिति उनको अलग-अलग हितों की ओर ले जाती है। साथ ही 12हवीं शताब्दी का इन्सान 19वीं शताब्दी के इन्सान से अलग था। मनुष्य प्रकृति का उत्पाद है तो मनुष्यों में यह बदलाव क्यों हो रहा है?

मार्क्स ने इन्हीं सवालों का हल ढूंढने का प्रयास किया। वे फायरबाख की धर्म की आलोचना से संतुष्ट नहीं हुए। फायरबाख ने मानवीय सारतत्व से धर्म के सारतत्व की व्याख्या की। पर मानवीय सारतत्व कोई निरपेक्ष चीज नहीं है जो हर व्यक्ति से समान रूप से बंधी हो। मनुष्य स्वयं निश्चित सामाजिक सम्बन्धों में बंधा होता है कोई भी व्यक्ति इन सामाजिक संबंधों से परे स्वतंत्र रूप से मौजूद नहीं है। ऐतिहासिक विकास क्रम में मनुष्यों के बीच सामाजिक संबंध उनके बीच प्राकृतिक संबंधों से अधिक प्राथमिक होते जाते हैं। इसीलिए धार्मिक भावनायें कोई प्राकृतिक नहीं वरन सामाजिक उत्पाद हैं।

मार्क्स से पूर्ववर्ती काल में ज्ञान की जिस दूसरी धारा का तेजी से विकास हुआ था वह थी ब्रिटेन का राजनैतिक अर्थशास्त्र। राजनैतिक अर्थशास्त्र ने स्वाभाविक तौर पर उस देश में प्रगति की जहां पूंजीवादी विकास सबसे ज्यादा था जहां पूंजीवादी उत्पादन सम्बन्ध एकदम स्पष्ट रूप से मौजूद थे।

क्लासिकीय बुर्जुआ राजनीतिक अर्थशास्त्र की नींव इंग्लैण्ड में विलियम पेटी द्वारा डाली गयी व इसे ऐडम स्मिथ, डेविड रिकार्डो द्वारा विकसित किया गया। मूल्य का श्रम सिद्धान्त इसका एक प्रमुख तत्व था। जिसके अनुसार किसी माल का मूल्य उसमें लगे श्रम पर निर्भर करता है। एडम स्मिथ जहां मूल्य के श्रम सिद्धान्त की बात करते-करते इससे अंतर्विरोधी बातों तक पहुंच जाते हैं। वहीं रिकार्डो अधिक मजबूती से इस पर खड़े रहते हैं।

एडम स्मिथ (1723-90) ने मुक्त प्रतियोगिता की वकालत करते हुए कहा कि स्वतंत्र व्यक्तियों की अपने हितों में की गयी प्रतियोगिता को अगर बिना किसी रुकावट के स्वतंत्र छोड़ दिया जाता है तो इससे न केवल प्राकृतिक सामाजिक व्यवस्था कायम होती है बल्कि यह देशों की आय में और सभी इंसानों की समृद्धि- खुशहाली में तेज वृद्धि पैदा करती है।

एडम स्मिथ ने अपना विश्लेषण श्रम विभाजन से शुरू किया। उनके अनुसार श्रम उत्पादकता में वृद्धि का मुख्य कारण श्रम विभाजन था। उनके अनुसार समस्त उत्पादन के मालिक के बतौर पूंजीपति वर्ग का पैदा होना सबके लिए यहां तक कि मजदूरों के लिए भी हितकारी है।

रिकार्डो ने मूल्य का श्रम सिद्धान्त, मुनाफे, किराये, मजदूरी, संचय सम्बन्धी सिद्धान्त प्रस्तुत किये। अपने मूल्य के श्रम सिद्धान्त के तहत उन्होंने बताया कि किसी माल का मूल्य उसमें लगे श्रम से निर्धारित होता है। इसके साथ ही दो वस्तुओं का विनिमय उनमें लगे श्रम की मात्रा के अनुपात में होता है। पर मजदूरी के सवाल पर वे इस संतुलन को लागू नहीं करते। क्योंकि तब उन्हें स्वीकारना पड़ता कि मजदूर को दी जाने वाली मजदूरी उसके द्वारा उत्पादित माल में जोड़े मूल्य से कम होती है। इसके बजाय वे श्रम को परिवर्तनीय मानते हुए मांग व पूर्ति व अन्य कारकों से उसके मूल्य निर्धारण की बात करने लगते हैं।

स्मिथ और रिकार्डो दोनों के लिए समस्त बन्धनों से मुक्त पूंजीवादी उत्पादन समस्त समाज की समृद्धि का स्रोत है। वे दोनों ही इस समाज में मजदूरों के द्वारा झेले जा रहे शोषण से आंखें मूंदे रहते हैं।

रिकार्डो के बाद उनके अनुयायी अर्थशास्त्रियों थाम्पसन (1783-1833), जान ग्रे (1799-1850), फ्रांसिस ब्रैग (1809-1895) आदि ने पूंजीवादी व्यवस्था में मजदूरों को उनके द्वारा उत्पादित मूल्य से कम मजदूरी मिलने का तथ्य उद्घाटित किया। उन्होंने बताया कि इसी वजह से मजदूर वर्ग की कंगाली पैदा होती है।

पूंजीवादी व्यवस्था में मजदूरों की कंगाली-बदहाली इतनी सुस्पष्ट होने लगी थी कि पूंजीवादी अर्थशास्त्रियों का इसको नजरअंदाज करना मुश्किल होने लगा। माल्थस ने इसका दोष जनता पर थोपने के लिए अपना कुख्यात जनसंख्या सिद्धान्त पेश किया।

स्मिथ रिकार्डो के क्लासिकीय राजनैतिक अर्थशास्त्र को तार्किक परिणति तक पहुंचाने का काम मार्क्सवाद ने किया।

ज्ञान की तीसरी शाखा फ्रांसीसी समाजवादी थी। पूंजीवादी की भारी अमीरी गरीबी को देखते हुए एक के बाद एक विचारकों ने आदर्श समाज की अपनी रूपरेखा पेश की। एक ऐसे समाज जो ज्यादा तार्किक व सबके हितों को साधने वाला हो, को उन्होंने समाजवाद का नाम दिया।

समाजवाद की दिशा में पहला प्रयास फ्रांसीसी क्रांति के दौरान ग्रेकस बाब्यूफ के षड्यंत्र के रूप में सामने आया। बाब्यूफ का मत था कि निजी सम्पत्ति के खात्मे से समानता स्थापित की जा सकती है। समानता कायम रखने के लिए सभी लोगों में उनके द्वारा किये काम से स्वतंत्र समान सम्पत्ति का बंटवारा किया जायेगा। सबको शारीरिक श्रम करने व एक सा जीवन जीने को सुनिश्चित किया जायेगा। कोई उत्तराधिकार नहीं होगा। बाब्यूफवादियों ने षड्यंत्र के जरिये 1796 में सत्ता पर कब्जे का प्रयास किया। उनका मत था कि जब तक जनता पर्याप्त रूप से शिक्षित व अपने चुने हुए निकायों के जरिये शासन करने लायक नहीं बन जाती तब तक उन्हें शासन करना पड़ेगा। बाब्यूफ का षड्यंत्र उजागर हो गया और उसे गिलोटिन पर चढ़ा दिया गया। षड्यंत्र के उसके विचारों को कुछ हद तक लुई ब्लांकी ने अपनाया। बाब्यूफवादी वर्गों के बजाय समाज को अमीर-गरीब में बंटा देखते थे।

फ्रांसीसी क्रांति के बाद कायम समाज से नाखुश सेंट साइमन ने अपने आदर्श समाजवाद का खाका खींचते हुए बताया कि इस समाज में उत्पादन योजनाबद्ध व सामाजिक जरूरतों के अनुरूप होगा। उनके आदर्श समाज में आनुवांशिक श्रेणी क्रम समाप्त हो जायेगा। समाज के ऊंचे पदों पर वे बुद्धिमान लोग होंगे जो समाज की व्यवस्था व विकास की देख-रेख करेंगे। इस व्यवस्था में यद्यपि सर्वहारा की कंगाली समाप्त हो जायेगी पर सेंट साइमन ने अपने इस आदर्श समाज को स्थापित करने वाली ताकत के बतौर सर्वहारा वर्ग को चिह्नित नहीं किया। उनके अनुसार उद्योगपति, बैंकर, कलाकार, बुद्धिजीवी व धर्म के लोग इस काम को करेंगे। इस योजना को शांतिपूर्ण सुधारों के रूप में लागू किया जायेगा। सेण्ट साइमन के अनुसार मौजूदा राजसत्ता के तहत ही आदर्श समाज स्थापित हो सकता है और उन्होंने इस समाज को किसी हद तक धार्मिक स्वरूप भी दे दिया। सेण्ट साइमन की मृत्यु के बाद उसके अनुयाइयों ने इनकी शिक्षाओं के धार्मिक पक्ष पर जोर देते हुए इसे एक पंथ में बदल दिया। हालांकि उनके कुछ विचारों का प्रभाव लुइस ब्लांक व लासाल पर भी पड़ा।

ब्रिटेन के राबर्ट ओवेन अपने समय के एक अन्य समाजवादी विचारक थे। उन्होंने अपनी पुस्तक 'ए न्यू व्यू ऑफ सोसाइटी' के जरिये नये समाज की अवधारणा रखी। उन्होंने अपने प्रस्तावित समाज को मजदूरों-पूंजीपतियों सबके फायदे का बताया। उन्होंने पूंजीपतियों, सांसदों से मजदूरों को ज्यादा वेतन देने, उनकी शिक्षा, आवास आदि के प्रबन्ध का आह्वान किया। व्यवहार में उन्होंने अपने कारखानों में इसे लागू कर कम्युनिस्ट कालोनियां बसायीं। अन्य लोगों से समर्थन न मिलने पर उन्होंने सर्वहारा वर्ग को संगठित कर उनकी बेहतरी के लिए आर्थिक संघर्ष चलाया।

शार्ल फूरिये ने मजदूरों की कंगाली, शोषण का कारण मौजूदा गलत व्यवस्था को बतलाया। अपनी आदर्श व्यवस्था पेश करते हुए उन्होंने बतलाया कि समाज की व्यवस्था इस तरह होगी जो सबकी बेहतरी पैदा करेगी। इसमें लोगों के हितों में टकराव नहीं होगा। इस आदर्श व्यवस्था में 2000 लोगों की बुनियादी इकाई होगी। फूरिये ने ओवन व सेंट साइमन की तरह मौजूदा व्यवस्था में लोगों की सोच बदलने के बजाय नयी सामाजिक व्यवस्था बनाने पर जोर दिया।

इन काल्पनिक समाजवादियों के विचार मानव प्रकृति को अपरिवर्तनीय मानते हुए उसके अनुरूप एक आदर्श व्यवस्था खोजने को प्रेरित थे। पर इनके विभिन्न बिखरे विचारों में आधुनिक वैज्ञानिक समाजवाद के बीज छुपे हुए थे। सेण्ट साइमन उत्पादन को अतीव महत्व देते हुए राजनीति को उत्पादन का विज्ञान बताने तक बढ़ गये। कम्युनिस्ट घोषणापत्र में इनके सकारात्मक पक्षों को बताते हुए मार्क्स-एंगेल्स ने इन तत्वों को गिनाया-शहर और देहात के बीच अंतर का खात्मा, परिवार का अंत, उद्योगों के निजी हाथों में संचालन का खात्मा, मजदूरी व्यवस्था का खात्मा, राज्य की केवल उत्पादन के निरीक्षक की भूमिका आदि।

यहीं पर काल्पनिक कम्युनिज्म की उन दो धाराओं की चर्चा कर लेना भी जरूरी है जो उस समय (19वीं सदी के मध्य) मजदूर आंदोलन में एक हद तक प्रभाव रखते थे। ये थे फ्रांस में काबे का "इकारियन" कम्युनिज्म और जर्मनी में वाइटलिंग का कम्युनिज्म।

काबे ने इकारिया की यात्रा नामक पुस्तक लिखी थी जिसमें यूटोपियाई कम्युनिस्ट समाज का वर्णन है। वह मानते थे कि पूंजीवादी शासन प्रणाली की त्रुटियां समाज के शांतिपूर्ण कायाकल्प से दूर की जा सकती हैं। बाद में काबे ने अमेरिका में कम्युनिस्ट समुदाय स्थापित कर अपने विचारों को कार्यरूप देने का प्रयास किया, परन्तु यह प्रयोग असफल रहा।

वाइटलिंग ने काल्पनिक समाजवादियों के उलट मजदूर वर्ग की मुक्ति के लिए प्रस्तुत अपने काल्पनिक कम्युनिज्म को स्थापित करने के लिए किन्हीं शिक्षित वर्गों से अपील करने के बजाय इसके लिए मजदूर वर्ग का ही रुख किया।

यह एक स्थापित तथ्य है कि मार्क्स-एंगेल्स ने जब 1848 में कम्युनिस्ट घोषणापत्र प्रकाशित किया तो उन्होंने खुद को काबे व वाइटलिंग के कम्युनिज्म से जोड़ा न कि तमाम काल्पनिक समाजवादी पंथों से। इस संदर्भ में कम्युनिस्ट घोषणापत्र की 1890 में जर्मन संस्करण की भूमिका में एंगेल्स कहते हैं-

> "फिर भी उसके प्रकाशन के समय हम उसे समाजवादी घोषणापत्र नहीं कह सकते थे। 1847 में दो तरह के लोग समाजवादी माने जाते थे। एक ओर विभिन्न कल्पनावादी पद्धतियों के अनुयायी-खासकर इंग्लैण्ड में ओवेनपंथी और फ्रांस में फूरियेपंथी, ये दोनों मात्र मरणासन्न संकीर्ण पंथ बनकर रह गये थे, दूसरी ओर थे नाना प्रकार के सामाजिक नीम हकीम, जो पूंजी तथा मुनाफे को जरा भी क्षति पहुंचाये बिना, सब तरह की टांकासाजी के बल पर सब किस्म की सामाजिक बुराइयों का अन्त कर देना चाहते थे। ये दोनों ही तरह के लोग मजदूर आंदोलन के बाहर थे तथा समर्थन के लिए "शिक्षित" वर्गों पर आस लगाये बैठे रहते थे। इसक विपरीत, मजदूर वर्ग के जिस हिस्से को यह पूरा विश्वास हो चुका था कि मात्र राजनीतिक क्रांतियां पर्याप्त नहीं हैं तथा जो समाज के आमूल पुनर्निर्माण की मांग करता था, वह उस समय अपने को कम्युनिस्ट कहता था;- यह भौंड़ा, बेडौल, विशुद्ध रूप से सहज प्रेरणात्मक किस्म का कम्युनिज्म था; फिर भी उसमें इतनी शक्ति थी कि उसने काल्पनिक कम्युनिज्म की दो पद्धतियों को जन्म दिया-फ्रांस में काबे के "इकारियन" कम्युनिज्म और जर्मनी में वाइटलिंग के कम्युनिज्म को। 1847 में समाजवाद बुर्जुआ आंदोलन तथा कम्युनिज्म मजदूर आंदोलन था। कम से कम महाद्वीप में समाजवाद काफी प्रतिष्ठा प्राप्त था जबकि कम्युनिज्म इसके ठीक विपरीत स्थिति में था। और चूंकि हमारी उस समय ही यह पक्की राय बन चुकी थी कि "मजदूर वर्ग की मुक्ति स्वयं मजदूर वर्ग का कार्य ही हो सकता है", इसलिए इसमें संदेह की कोई गुंजाइश नहीं थी कि हमें दोनों में से कौन सा नाम अपनाना चाहिए था। तभी से इस नाम का त्याग करने का हमें कभी ख्याल नहीं आया।"
>
> (एंगेल्स, 1890 के जर्मन संस्करण की भूमिका, कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र)

इस तरह से उन्नीसवीं शताब्दी के जर्मन दर्शन, आंग्ल राजनीतिक अर्थशास्त्र और फ्रांसीसी समाजवाद के विचारों से ही आगे विकसित होकर मार्क्सवाद का सृजन हुआ। ये मार्क्सवाद के तीन स्रोत व साथ ही उसके संघटक अंग भी हैं।

# IV

मार्क्स-एंगेल्स ने अपने पूर्ववर्ती विचारों की समालोचना करते हुए नये विचारों को प्रस्तुत किया । मार्क्स (और एंगेल्स) द्वारा सृजित ये विचार सर्वहारा वर्ग की मुक्ति की विचारधारा बने। यहां हम मार्कसवाद की प्रमुख बातों की संक्षेप में चर्चा करेंगे।

**द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद**-दर्शन का बुनियादी प्रश्न यह है कि पदार्थ और चेतना में कौन प्राथमिक है जिन दार्शनिकों ने चेतना को प्राथमिक बतलाया और पदार्थ को चेतना द्वारा उत्पन्न किया हुआ बताया वो भाववादी कहलाये। जिन्होंने पदार्थ को प्राथमिकता दी वो भौतिकवादी कहलाये।

मार्क्सवादी दर्शन भौतिकवादी दर्शन है। मार्क्स से पहले का भौतिकवाद जिसके प्रस्तोताओं में ब्रिटिश-फ्रांसीसी भौतिकवादियों से लेकर फायरबाख तक शामिल हैं मुख्यतः यांत्रिक, अनैतिहासिक, अधिभूतवादी था। वह मानव सार को सभी सामाजिक सम्बन्धों की समष्टि के रूप में नहीं बल्कि अमूर्त ढंग से ग्रहण करता था और इसलिए संसार की केवल व्याख्या करने तक सीमित रहता था जबकि जरूरत उसे बदलने की है। पुराने भौतिकवादी ज्ञान प्राप्त करने के संदर्भ में सक्रियता के पक्ष को नहीं समझते थे। ज्ञान उनके अनुसार केवल निष्क्रिय चिंतन से उपजता था। मार्क्सवादी दर्शन ने पुराने भौतिकवाद की इन कमियों को दूर किया और उसे द्वन्द्ववाद से समृद्ध किया।

प्रकृति में मौजूद सभी चीजें-प्राणी पदार्थ हैं। प्रकृति स्वतः से विद्यमान है इसको अस्तित्व में लाने के लिए किसी रचयिता की आवश्यकता नहीं थी। इस तरह मार्क्सवादी दर्शन भौतिक जगत की वस्तुगतता को स्वीकारता है। चेतना मानव मस्तिष्क की पैदावार है। चूंकि मनुष्य स्वयं प्रकृति की एक पैदावार है जिसका एक प्रक्रिया में विकास हुआ है इसलिए मानव मस्तिष्क की पैदावार चेतना अंततः प्रकृति की पैदावार होती है। इसीलिए प्रकृति के शेष अंतर्संबंधों से उसका कोई विरोध नहीं होता बल्कि वह उसके अनुरूप होती है।

भौतिक जगत जिसमें भारी विविधता लिए चीजें व प्रक्रियाएं मौजूद होती हैं वह हमारी चेतना से स्वतंत्र वस्तुगत रूप में मौजूद होता है। जब चेतनशील प्राणी यानी मनुष्य नहीं था तब भी भौतिक जगत मौजूद था। भौतिक जगत हमारे संवेदी अंगों पर क्रिया करता है और हमारी चेतना में प्रतिबिम्बित हो जाता है। अर्थात चेतना पदार्थ का ही प्रतिबिम्ब होती है।

गति पदार्थ के अस्तित्व की विधि है। पूरी दुनिया में गतिशील पदार्थ के अलावा कुछ भी मौजूद नहीं है। पदार्थ को उसकी गति से अलग नहीं किया जा सकता। दुनिया का समस्त पदार्थ लगातार गति की, परिवर्तन की अवस्था में है। कोई भी पदार्थ स्थिर नहीं है। गति के विविध रूप हो सकते हैं इसमें यांत्रिक गति से लेकर, जीवन में परिवर्तन, मानव समाज का विकास सब शामिल हैं।

मार्क्सवाद अज्ञेयवाद व अनुभववाद का विरोधी है। मार्क्सवाद मानता है कि भौतिक जगत को जाना जा सकता है। यह तो संभव है कि कुछ चीजें ऐसी हो सकती हैं जिनको आज हम नहीं जानते उनको हम भविष्य में जान जायेंगे। पर कोई भी चीज ऐसी नहीं है जिसे कभी भी न जाना जा सके। मार्क्सवाद के ज्ञान सिद्धान्त के अनुसार सत्य को परखने की कसौटी सामाजिक व्यवहार है।

हेगेल के द्वन्द्ववाद को मार्क्स और एंगेल्स ने सचेतन ढंग से जर्मन भाववादी दर्शन से मुक्त कर प्रकृति व इतिहास की भौतिकवादी अवधारणा पर लागू किया। द्वन्द्ववाद को परिभाषित करते हुए मार्क्स ने बतलाया कि द्वन्द्ववाद वाह्य जगत और मानव चिंतन की गति के सामान्य नियमों का विज्ञान है।

द्वन्द्ववाद विश्व को वस्तुओं के समुच्चय के रूप में नहीं बल्कि प्रक्रियाओं - के समुच्चय के रूप में ग्रहण करता है। इसके अनुसार समस्त वस्तुएं, मानव मस्तिष्क में उनका प्रतिबिम्ब अर्थात धारणायें भी स्थिर नहीं हैं बल्कि वे सतत् परिवर्तन के क्रम से गुजरती हैं। द्वन्द्ववाद के लिए कोई भी वस्तु, विचार अंतिम व निरपेक्ष नहीं है। वह हर चीज में परिवर्तनशील गुण प्रदर्शित करता है। परिवर्तन की प्रक्रिया निम्न अवस्था से उच्च अवस्था की ओर, उत्पत्ति तथा विनाश की अविरत प्रक्रिया होती है।

अधिभूतवाद के उलट द्वन्द्ववाद हर वस्तु, प्रक्रिया विचार को न केवल सतत् परिवर्तन की अवस्था में देखता है बल्कि वे उसे अन्य वस्तुओं, प्रक्रियाओं विचारों के अंतर्संबंधों के रूप में भी देखता है। एंगेल्स ने द्वन्द्ववाद को परिभाषित करते हुए कहा कि द्वन्द्ववाद प्रकृति, मानव समाज व चिंतन की गति के सामान्य नियमों के विज्ञान के अलावा और कुछ नहीं है।

दरअसल प्रकृति, मानव समाज और चिंतन में लगातार होने वाले परिवर्तन हमेशा से द्वन्द्वात्मक तरीके से होते रहे हैं। प्रकृति व समाज द्वन्द्वात्मक तरीके से बदलता है मनुष्य द्वन्द्वात्मक तरीके से सोचता रहा है भले ही उसे इसका संज्ञान न रहा हो। मार्क्सवादी दर्शन ने महज उन नियमों की खोज की है जिन पर प्रकृति, मानव समाज व चिंतन पहले से चल रहे थे। इसीलिए द्वन्द्ववाद के नियमों को प्रकृति, मानव समाज पर आरोपित नहीं किया गया बल्कि उन्हें प्रकृति व मानव समाज के विकास के अध्ययन से खोज निकाला गया। आधुनिक विज्ञान की नयी नयी खोजों ने इन नियमों को खोजने व इनकी पुष्टि करने में मदद की।

मार्क्स-एंगेल्स ने द्वन्द्ववाद के नियमों के रूप में बतलाया कि किसी वस्तु, परिघटना या समाज के भीतर परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों की एकता व संघर्ष मौजूद होता है यही संघर्ष विकास या परिवर्तन की आंतरिक प्रेरणा का काम करता है (विपरीत तत्वों की एकता का नियम)। इसके साथ ही विकास लगातार सीधी रेखा में नहीं बल्कि छलांगों-क्रांतियों के साथ होता है, परिमाण में धीरे-धीरे

होने वाला सतत् परिवर्तन एक अवस्था में जाकर गुणात्मक परिवर्तनों को जन्म देता है (परिमाण का गुण में परिवर्तन)। विकास की प्रक्रिया में गुजर चुकी मंजिल का उच्चतर आधार पर होने वाला दोहराव (निषेध का निषेध) होता है।

**ऐतिहासिक भौतिकवाद**- मार्क्स एंगेल्स ने अपने दर्शन का मूल उद्देश्य दुनिया की व्याख्या करना नहीं बल्कि उसे बदलने को बतलाया। उन्होंने दर्शन को दुनिया को बदलने का क्रांतिकारी कार्यभार दिया। उन्होंने मानव समाज के इतिहास पर द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद को लागू करके ऐतिहासिक भौतिकवाद को विकसित किया। इसकी मुख्य बातें इस प्रकार हैं।

● सभी मनुष्यों की सबसे बुनियादी कार्यवाही उत्पादन की कार्यवाही है। उत्पादन की कार्यवाही के दौरान किये जाने वाले श्रम ने ही मनुष्य की शारीरिक व मानसिक क्षमताओं का विकास किया। इस श्रम ने ही उसे जानवर से इंसान बनाया। उत्पादन करने के लिए मनुष्य ने उत्पादन के औजारों या उत्पादन के साधनों को विकसित किया। उत्पादन के साधन और मानव श्रम को सम्मिलित रूप से उत्पादक शक्ति कहा जाता है।

● उत्पादन की प्रक्रिया में मनुष्य आपस में निश्चित संबंधों में बंधते हैं जो उनकी इच्छा से स्वतंत्र होते हैं। उत्पादन के ये संबंध उत्पादन की भौतिक शक्तियों के विकास की एक निश्चित मंजिल के अनुरूप होते हैं। उत्पादन प्रक्रिया में उत्पादन शक्तियों और उत्पादन सम्बन्धों के बीच निश्चित संबंध होता है। उनके बीच एकता और संघर्ष दोनों मौजूद होते हैं। इनके बीच का संघर्ष ही समाज को एक अवस्था से दूसरी अवस्था में ले जाता है। इसीलिए इनके बीच के संघर्ष को समाज की चालक शक्ति कह सकते हैं।

● उत्पादक शक्तियां लगातार विकसित होती रहती हैं। अपने विकास की एक खास मंजिल में पहुंचकर भौतिक उत्पादक शक्तियां तत्कालीन उत्पादन संबंधों से टकराती हैं जिनके अंतर्गत वे अब तक काम कर रही होती हैं। अब ये उत्पादन संबंध उत्पादक शक्तियों के आगे विकास की राह में बेड़ियां बन जाते हैं। उत्पादक शक्तियों के आगे के विकास के लिए जरूरी होता है कि उत्पादन संबंधों को बदलकर पहले ही आगे बढ़ चुकी उत्पादक शक्तियों के अनुरूप नये उत्पादन संबंध कायम किये जायें। एक सामाजिक क्रांति के जरिये पुराने उत्पादन संबंधों को बदल दिया जाता है। अब उत्पादक शक्तियां फिर से तेजी से विकसित होने लगती हैं पर विकास की खास अवस्था में पहुंच वे फिर नये कायम हुए उत्पादन संबंधों से टकराने लगती हैं।

● उत्पादन संबंधों का कुल योग ही समाज का बुनियादी आर्थिक ढांचा होता है। इस बुनियादी आर्थिक ढांचे पर ही कानून-राजनीति का ऊपरी ढांचा खड़ा होता है और जिसके अनुकूल सामाजिक चेतना के निश्चित रूप होते हैं। इस तरह भौतिक जीवन की उत्पादन प्रणाली जीवन की आम सामाजिक, राजनीतिक, बौद्धिक प्रक्रिया को निर्धारित करती है। मनुष्य की चेतना उसके अस्तित्व को निर्धारित नहीं करती बल्कि उनका सामाजिक अस्तित्व उनकी चेतना को निर्धारित करता है। उत्पादन सम्बन्धों के बदलने के साथ ही वृहदाकार ऊपरी ढांचा भी तेजी से बदल जाता है।

● ऐतिहासिक भौतिकवाद की मान्यताओं में इतिहास की भौतिकवादी धारणा से पहले के ऐतिहासिक सिद्धान्तों की कमियों को दूर कर लिया गया। पहले के इतिहासकार लोगों की ऐतिहासिक गतिविधियों के केवल वैचारिक लक्ष्यों की छान बीन करते थे। वे इस बात की छान बीन नहीं करते थे कि उनके ये वैचारिक लक्ष्य किस चीज से पैदा होते हैं। वे यह नहीं देख पाते थे कि मनुष्यों के ये वैचारिक लक्ष्य सामाजिक संबंधों के विकास से उद्भूत होते हैं ओर इन सामाजिक संबंधों की जड़ें भौतिक उत्पादन के विकास की मात्रा में निहित होती हैं।

इसके साथ ही पहले के सिद्धान्त जनसाधारण की गतिविधियों को अपनी परिधि में लेते ही नहीं थे। जबकि ऐतिहासिक भौतिकवाद ने जनसाधारण के जीवन की सामाजिक अवस्थाओं और उनमें होने वाले बदलाव का सटीकता से अध्ययन संभव बना दिया।

● इतिहास की उपरोक्त भौतिकवादी अवधारणा ने अब तक के इतिहास में कायम विभिन्न उत्पादन सम्बन्धों (कबीलाई समाज, दास समाज, सामन्ती समाज, पूंजीवादी समाज) की क्रमबद्ध व्याख्या प्रस्तुत की।

**वर्ग संघर्ष**- उत्पादक शक्तियों और उत्पादन संबंधों के बीच का संघर्ष वर्गीय समाजों में खुद को वर्गों के बीच संघर्ष के रूप में अभिव्यक्त करता है। यह वर्ग संघर्ष ही समाज के विकास की प्रमुख प्रेरक शक्ति बन जाता है। इसीलिए कहा जाता है कि वर्गीय समाजों का समूचा इतिहास वर्ग संघर्षों का इतिहास है।

कम्युनिस्ट घोषणापत्र में कहा गया है कि अब तक के सभी वर्गीय समाजों में उत्पीड़क व उत्पीड़ित लगातार संघर्षरत रहे हैं और इस लड़ाई का अंत हर बार या तो समाज के क्रांतिकारी पुनर्गठन में या संघर्षरत दोनों वर्गों की बर्बादी में हुआ है।

मार्क्स एंगेल्स पूंजीवादी समाज का वर्गीय विश्लेषण कर बतलाते हैं कि पूंजीवादी समाज के दो विरोधी वर्ग पूंजीपति वर्ग व मजदूर वर्ग हैं। पूंजीवादी समाज की खास विशेषता यह है कि इसने वर्ग विरोधों को सरल बना दिया है। पूंजीवादी समाज में बुर्जुआ वर्ग के मुकाबले खड़े सभी वर्गों में सर्वहारा ही सबसे क्रांतिकारी वर्ग है। बाकी वर्गों मसलन निम्न मध्यम वर्ग (छोटे कारखानेदार, दस्तकार, छोटे व्यापारी, किसान) अपने अस्तित्व को बचाने के लिए बुर्जुआ वर्ग से संघर्ष करते हैं इसलिए वे क्रांतिकारी नहीं रूढ़िवादी है। वे इतिहास के चक्र को पीछे की ओर घुमाने की कोशिश करते है इसलिए प्रतिगामी हैं। अगर वे क्रांतिकारी हैं तो केवल इसलिए कि बहुत शीघ्र ही उन्हें सर्वहारा वर्ग में मिल जाना है। इसलिए वे सर्वहारा के साथ खड़े होकर अपने वर्तमान नहीं बल्कि भविष्य के हितों की रक्षा कर सकते हैं।

**मार्क्स की आर्थिक शिक्षा**-मार्क्स ने पूंजीवादी समाज के आर्थिक नियमों को खोलकर रख देने का काम 'पूंजी' नामक रचना में किया। संक्षेप में मार्क्स की आर्थिक शिक्षाएं इस प्रकार हैं।

- मार्क्स ने रिकार्डो के मूल्य के श्रम सिद्धान्त का आगे बढ़ाते हुए सुसंगत रूप से विकसित किया। उन्होंने सिद्ध कर दिया कि हर माल का मूल्य इस बात से निर्धारित होता है कि उसके उत्पादन में सामाजिक रूप से कितना आवश्यक श्रम काल लगाया गया है।
- बुर्जुआ अर्थशास्त्रियों ने वस्तु विनिमय में वस्तुओं के बीच पारस्परिक संबंध को देखा था वहीं मार्क्स ने विनिमय की प्रक्रिया में मनुष्यों के बीच बनने वाले संबंधों का उद्घाटन किया। मालों का विनिमय मंडी के माध्यम से अलग-अलग उत्पादकों के पारस्परिक संबंधों को व्यक्त करता है। मुद्रा के आने के साथ यह संबंध और घनिष्ठ होता जाता है। और अलग-अलग उत्पादकों के समूचे आर्थिक जीवन को एक समष्टि में अभिन्न रूप से बांधता जाता है। पूंजी इस संबंध के विकास की अगली मंजिल है जब मनुष्य की श्रमशक्ति खुद एक माल बन जाती है।
- माल उत्पादन की एक खास अवस्था में मुद्रा पूंजी में रूपान्तरित हो जाती है। पूंजीवादी उत्पादन में पैदा होने वाला बेशी मूल्य मालों के विनिमय की प्रक्रिया में नहीं पैदा होता। बल्कि यह केवल उत्पादन की प्रक्रिया में पैदा होता है। मजदूर की श्रमशक्ति एक ऐसा विशिष्ट माल है जो अपने मूल्य से अधिक मूल्य सृजित कर देती है।

पूंजीपति मजदूर से उसकी श्रमशक्ति उसके मूल्य पर खरीद लेता है। बाकी मालों की तरह श्रमशक्ति का मूल्य भी उसके उत्पादन में सामाजिक रूप से आवश्यक श्रमकाल द्वारा निर्धारित होता है। यानी मजदूर और उसके परिवार के भरण पोषण में लगने वाले साधन के मूल्य द्वारा उसकी श्रमशक्ति का मूल्य निर्धारित होता है।

उदाहरणतः अगर किसी मजदूर की श्रमशक्ति की खरीद पूंजीपति को उसका दिन में 12 घंटे उपयोग करने की इजाजत देती है यानी पूंजीपति मजदूर से 12 घंटे काम कराता है तो इन 12 घंटों के काम के शुरुआती 6 घंटों में मजदूर अपने भरण पोषण का खर्चा पूरा करने लायक मूल्य पैदा कर देता है और अगले 6 घंटे वह पूंजीपति से बिना कुछ भुगतान पाये बेशी उपज या बेशी मूल्य पैदा करता है। इस तरह पूंजीपति इस बेशी मूल्य को हड़प लेता है। यही मजदूर के शोषण का रहस्य है।

पूंजीपति की दिलचस्पी इस बेशी मूल्य को लगातार बढ़ाने में होती है। ऐसा वह कार्य दिवस को लंबा बनाकर (निरपेक्ष बेशी मूल्य) या आवश्यक श्रमकाल को घटाकर (यानी मजदूर द्वारा अपनी श्रमशक्ति के मूल्य के बराबर मूल्य सृजन में लगा वक्त घटाकर) करता है (सापेक्ष बेशी मूल्य)।

बेशी मूल्य की यह शिक्षा ही मार्क्स के आर्थिक सिद्धान्त की आधारशिला है।

- उत्पादन प्रक्रिया में प्राप्त बेशी मूल्य का पूरा हिस्सा पूंजीपति अपने उपभोग में खर्च नहीं करता बल्कि वह इसके एक हिस्से का उपयोग आगे के उत्पादन में करता है। इस तरह विस्तारित पैमाने के पूंजीवादी उत्पादन के जरिये पूंजीपति की पूंजी बढ़ती जाती है।
- पूंजी संचय अपनी बारी में मजदूरों की रिजर्व सेना (बेरोजगारों की फौज) को पैदा करता है। यह रिजर्व सेना और अधिक पूंजी संचय के लिए लीवर का काम करने लगती है। पूंजी संचय ही पूंजीवादी समाजों को बार-बार आने वाले आर्थिक संकटों की ओर ले जाता है।
- समाज के तौर पर पूंजीपति आपस में लगातार एक दूसरे से संघर्षरत रहते हैं। पूंजी अधिकाधिक चन्द हाथों में इकट्ठा होती जाती है। ढेर सारे छोटे उत्पादकों का सम्पत्तिहरण होता जाता है। पूंजी का यह अधिकाधिक केन्द्रीकरण एक ओर चन्द अमीर पूंजीपति और दूसरी ओर भारी संख्या में तबाह बदहाल आबादी पैदा करता है। मजदूर वर्ग की तादाद लगातार बढ़ती जाती है। आधुनिक मशीनों के जरिये बड़े-बड़े कारखानों में उत्पादन मजदूर वर्ग को अधिकाधिक अनुशासित व संगठित करता जाता है।
- पूंजीवादी उत्पादन का स्वरूप अधिकाधिक सामाजिक होता जाता है। उत्पादन के सामाजिक स्वरूप व व्यक्तिगत मालिकाने के रूप में पूंजीवादी समाज का बुनियादी अंतर्विरोध सामने आता है। यह अंतर्विरोध अपनी बारी में खुद को पूंजीपतियों के बीच के होड़ व पूंजी व श्रम के बीच संघर्ष में अभिव्यक्त करता है।
- पूंजीवादी उत्पादन का बुनियादी अंतर्विरोध समाज को उस दिशा में ले जाता है जहां पूंजीवादी उत्पादन व्यवस्था के लिए खतरे की घंटी बज जाती है। मजदूर वर्ग इस क्रांति का वाहक बनता है व संपत्तिहरण करने वाले वर्ग की संपत्ति का हरण कर इस अंतर्विरोध को समाप्त कर देता है।

**वैज्ञानिक समाजवाद**-पूंजीवादी समाज के स्थापित होने के साथ ही तुरंत यह स्पष्ट हो गया कि यह श्रमिकों के उत्पीड़न व शोषण की नयी व्यवस्था है। इस उत्पीड़न के प्रतिबिंब के रूप में इस पूंजीवादी व्यवस्था के विरोध में तत्काल विभिन्न प्रकार के समाजवादी मत पैदा होने लगे। प्रारंभिक काल्पनिक समाजवाद पूंजीवाद की आलोचना-निंदा करता था उसके विनाश व बेहतर व्यवस्था की सुखद कल्पना करता था। पर वह वास्तविक समाधान का पता नहीं लगा पाया। वह न तो पूंजीवादी समाज के तहत उजरती गुलामी के असली स्वरूप की व्याख्या कर पाया और न ही उसके विकास के नियमों का पता लगा सका। साथ ही वह उस सामाजिक शक्ति का भी पता नहीं लगा पाया जिसमें नये समाज की रचना करने की क्षमता मौजूद थी।

उस जमाने में हो रही पूंजीवादी क्रांतियों ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने में मार्क्स-एंगेल्स की मदद की कि समस्त विकास का आधार व प्रेरक शक्ति वर्ग संघर्ष है। मार्क्स-एंगेल्स ने पूंजीवादी समाज के विश्लेषण के जरिये यह सिद्ध किया कि उनका समाजवाद किसी विलक्षण मस्तिष्क का आविष्कार नहीं है बल्कि यह ऐतिहासिक रूप से विकसित दो वर्गों पूंजीपति और सर्वहारा के संघर्ष का अवश्यम्भावी परिणाम है। इसका कार्यभार अब किसी आदर्श व्यवस्था का अपने मन से निर्माण नहीं रह गया है। बल्कि उन

ऐतिहासिक-आर्थिक घटनाओं का परीक्षण करना है जिनमें इन दोनों वर्गों का संघर्ष अवश्यम्भावी रूप से फूटता है व उन आर्थिक परिस्थितियों को खोजना है जिनमें इस संघर्ष का अंत हो जायेगा। समाजवाद अब विज्ञान बन गया है।

पूंजीवादी व्यवस्था में उत्पादन का बढ़ता सामाजिक स्वरूप समाजवाद के आगमन के लिए भौतिक आधार को अधिकाधिक मुकम्मल करता जाता है।

राष्ट्र व राज्य संबंधी प्रश्नों पर अतीत की व्यवस्था तक मार्क्स-एंगेल्स खुद को सीमित नहीं रखते बल्कि वे भविष्य का निर्भीकतापूर्ण अवलोकन और भविष्य को हासिल करने की व्यवहारिक कार्यवाही भी सुझाते हैं। पूंजीवाद द्वारा राष्ट्रों को पैदा करना और अपने आगे के विकासक्रम में राष्ट्रीय अलगाव को समाप्त करना उन्होंने काफी पहले ही देख लिया था। वे सर्वहारा वर्ग के अंतराष्ट्रीय स्तर पर समान हितों की बात सामने लाये।

राज्य के बारे में मार्क्सवाद बतलाता है। कि यह संगठित जोरजबरदस्ती का यंत्र है यह समाज के विकास की एक निश्चित मंजिल में अनिवार्यतः पैदा हुआ जब समाज ऐसे विरोधी वर्गों में बंट गया जिनमें किसी तरह का मेल मिलाप नही हो सकता था और जब समाज से परे वर्गों से ऊपर प्रतीत होने वाली सत्ता के बिना उनका अस्तित्व संभव नहीं हो सकता था तब राज्य पैदा हुआ। राज्य हमेशा से उत्पीड़क वर्गों के हाथ में उत्पीड़ित वर्ग को दबा कर रखने का औजार रहा है। बुर्जुआ राज्य उसका सर्वाधिक प्रगतिशील रूप जनवादी जनतंत्र भी इसका अपवाद नहीं है। वह भी पूंजी द्वारा उजरती श्रम के शोषण का साधन ही है। समाजवाद वर्गों के उन्मूलन की ओर ले जाते हुए राज्य के उन्मूलन की ओर भी ले जायेगा।

सर्वहारा वर्ग पूंजीवादी राज्य मशीनरी को नष्ट कर उसकी जगह समाजवादी राज्य कायम करेगा यह राज्य सर्वहारा की तानाशाही का एक रूप होगा जो सभी उत्पादन के साधनों को अपने अधिकार में ले लेगा। समाजवादी राज्य अपनी विकास प्रक्रिया में एक के बाद एक दूसरे क्षेत्रों में खुद को अनावश्यक बनाता जायेगा और फिर अपने आप समाप्त हो जायेगा। राज्य को रद्द नहीं किया जा सकता वह अपने आप समाप्त हो जायेगा।

मार्क्स ने खुद को केवल सैद्धान्तिक कार्य तक ही सीमित नहीं रखा बल्कि पहले के दार्शनिकों के उलट उन्होंने व्यवहारिक क्रांतिकारी सरगर्मी में न केवल हिस्सा लिया बल्कि सर्वहारा के वर्ग संघर्ष की कार्यनीतिक समस्याओं पर भी लगातार ध्यान दिया। उन्होंने बतलाया कि किसी समाज के सुस्पष्ट वर्गीय विश्लेषण, उस समाज के विकास की वस्तुगत मंजिल को निर्धारित करके एवं उस और अन्य समाजों के आपसी संबंधों को ध्यान में रखकर ही सर्वहारा वर्ग अपने लिए सही कार्यनीति निर्धारित कर सकता है।

कम्युनिस्ट घोषणपत्र में राजनीतिक संघर्ष की कार्यनीति के बारे में उन्होंने कहा-

> "कम्युनिस्ट मजदूरों के तात्कालिक लक्ष्यों के लिए लड़ते हैं, उनके सामाजिक हितों की रक्षा के लिए प्रयत्न करते है, किंतु वर्तमान के आंदोलन में वे इस आंदोलन के भविष्य का प्रतिनिधित्व करते हैं और उसका ध्यान रखते हैं।"

मार्क्स ने अपनी खोजों के संदर्भ मे वेडमेयर को लिखे पत्र में कहा था-

> "... ... ... जहां तक मेरा सम्बन्ध है, आधुनिक समाजों में वर्गों के अस्तित्व की खोज करने के श्रेय का मैं अधिकारी नहीं हूं। न ही उनके संघर्ष की खोज करने का श्रेय मुझे मिलना चाहिए। मुझसे बहुत पहले ही बुर्जुआ इतिहासकार वर्गों के इस संघर्ष के ऐतिहासिक विकास का और बुर्जुआ अर्थशास्त्री वर्गों की आर्थिक बनावट का वर्णन कर चुके थे। मैंने जो नई चीज की, वह यह सिद्ध करना था कि : (1) वर्गों का अस्तित्व उत्पादन के विकास के खास ऐतिहासिक दौरों के साथ बंधा हुआ है . .. ... ... (2) वर्ग संघर्ष लाजिमी तौर पर सर्वहारा के अधिनायकत्व की दिशा में ले जाता है। (3) यह अधिनायकत्व स्वयं सभी वर्गों के उन्मूलन तथा वर्गहीन समाज की ओर संक्रमण मात्र है। ... ... ..."

(मार्क्स, राज्य और क्रांति, पृष्ठ 36, समकालीन प्रकाशन, पटना, में लेनिन द्वारा उद्धृत)

## V

मार्क्स-एंगेल्स ने केवल सर्वहारा मुक्ति की वैज्ञानिक विचारधारा को सूत्रित ही नहीं किया बल्कि उस समय सर्वहारा वर्ग में मौजूद विभिन्न समाजवाद की गैर वैज्ञानिक किस्मों से संघर्ष भी किया। पूरे जीवन में उन्होंने मजदूर आंदोलन में मार्क्सवाद को स्थापित करने के लिए संघर्ष किया। उनके इस संघर्ष का परिणाम यह निकला कि मार्क्सवाद जो अपनी पैदाइश के वक्त मजदूर आंदोलन में मौजूद कई विचारधाराओं में से एक था, 19वीं सदी का अंत आते-आते मार्क्सवाद मजदूर आंदोलन की सर्वप्रमुख विचारधारा बन गया।

कम्युनिस्ट घोषणा पत्र में मार्क्स-एंगेल्स ने उस समय मजदूर आंदोलन में मौजूद किस्म-किस्म के समाजवादों की आलोचना की। उन्होंने इन किस्मों को प्रतिक्रियावादी समाजवाद, रूढ़िवादी या बुर्जुआ समाजवाद और आलोचनात्मक काल्पनिक समाजवाद की तीन श्रेणियों में बांटा।

उन्होंने प्रतिक्रियावादी समाजवाद के तहत सामंती समाजवाद, पेट्टी बुर्जुआ समाजवाद व जर्मन 'सच्चा' समाजवाद को रखा। सामंती समाजवाद फ्रांस और इंग्लैण्ड के सामंती तत्वों द्वारा बुर्जुआ वर्ग के खिलाफ चलाया जाने वाला संघर्ष था ये तत्व सामंती व्यवस्था की फिर से बहाली चाहते थे और इसके लिए मजदूर वर्ग के रहनुमा के बतौर खुद को प्रस्तुत करते थे। वे मजदूर वर्ग की बदहाली के लिए बुर्जुआ वर्ग व पूंजीवादी विकास को दोषी ठहराते थे। पेटी बुर्जुआ समाजवाद फ्रांस सरीखे देशों में पूंजीवादी विकास के चलते तबाह होते पेटी बुर्जुआ (छोटे उत्पादक, किसान, दस्तकार आदि) की कराह थी जो अपनी पूर्व स्थिति को हासिल करना चाहता था।

यह भी समाज को पीछे ले जाना चाहता था। सीसमंदी इसका वैचारिक प्रस्तोता था। अपने इस संघर्ष में वे मजदूरों को अपने साथ लाने की कोशिश करता था। जर्मन 'सच्चा' समाजवाद जर्मनी में ऐसे दार्शनिकों द्वारा पैदा किया गया जो फ्रांस में बुर्जुआ शासन में उसके खिलाफ लिखे साहित्य को जर्मनी में जस का तस प्रचारित  कर रहे थे। ऐसे तत्वों का जर्मनी के सामन्ती शासकों ने स्वागत किया और उनका उपयोग अपने बुर्जुआ वर्ग की बढ़त को रोकने में, अपने शासन को बनाये रखने में किया।

रूढ़िवादी या बुर्जुआ समाजवाद के तहत मार्क्स-एंगेल्स ने प्रूदों व ऐसे अर्थशास्त्रियों -मानवतावादियों, सुधारकों को रखा जो मूलतः पूंजीवादी व्यवस्था में ही कुछ सुधार सुझा इसे कुछ बेहतर बनाने का स्वप्न देखते थे। इनकी एक श्रेणी पूंजीवाद को इसके क्रांतिकारी तत्वों से मुक्त बनाना चाहती थी यानी वह बगैर सर्वहारा पूंजीवाद चाहती थी। इनकी दूसरी श्रेणी मजदूर वर्ग को राजनैतिक संघर्ष के बजाय केवल जीवन को बेहतर करने वाले आर्थिक संघर्ष का उपदेश देती थी।

तीसरी श्रेणी काल्पनिक समाजवादियों ओवन, सेंट साइमन, फूरिये के अनुयायियों की थी जिन्होंने काल्पनिक समाजवाद को एक पंथ में तब्दील कर दिया था और जो वास्तविक मजदूर आंदोलन का विरोध करते थे।

मार्क्स एंगेल्स ने समाजवाद की इन तीनों किस्मों को खारिज करते हुए वैज्ञानिक समाजवाद की स्थापना की।

**वाइटलिंग और प्रूदों**- वाइटलिंग और प्रूदों ऐसे सर्वहारा सिद्धान्तकार थे जिनकी मार्क्स बहुत इज्जत किया करते थे। इनका फ्रांसीसी मजदूर आंदोलन में बहुत गहरा प्रभाव था। वाइटलिंग प्रवासी जर्मन दर्जी थे। बाकी काल्पनिक समाजवादियों के उलट वाइटलिंग ने वर्गीय दृष्टिकोण से पूंजीवाद की आलोचना पेश की। उन्होंने सरकार या पूंजीपतियों से अपनी आदर्श व्यवस्था कम्युनिज्म पर चलने की मांग या उम्मीद नहीं की बल्कि घोषित किया कि सर्वहारा को केवल खुद पर इस काम के लिए विश्वास करना चाहिए। वाइटलिंग ने कम्युनिज्म को एक इसाई आदर्श के बतौर प्रस्तुत किया। प्रारम्भ में वाइटलिंग ने अलग अलग देशों में मजदूर आंदोलन में हिस्सा लिया पर बाद में वह एक विश्व भाषा के निर्माण में जुट गये। मार्क्स और वाइटलिंग के एकमत होने के प्रयास सफल नहीं हुए। वह एक जर्मन कारीगर की सोच से आगे नहीं बढ़ पाये।

प्रूदों फ्रांसीसी सर्वहारा के सिद्धान्तकार थे। बाकुनिन ने उन्हें अराजकतावाद का पिता कहा। प्रूदों सही विचारों पर आधारित नया रिपब्लिक कायम करना चाहते थे उन्होंने एक कार्यक्रम विकसित किया जिसके तहत मजदूरों में परस्पर सहयोग कायम होगा और आर्थिक मामलों का जिम्मा पूंजीपति मजदूरों के इस सहयोग को हस्तांतरित कर देंगे। इस सबके लिए एक बैंक स्थपित होगा जिसमें कम ब्याज पर ऋण उपलब्ध होगा और यह बैंक विनिमय नोट जारी करेगा जो सोने पर आधारित होगा और मुद्रा की जगह ले लेगा।

प्रूदों हर तरह की आर्थिक श्रेणी में अच्छाई और बुराई दोनों देखते हैं। उनके अनुसार बुर्जुआ अर्थशास्त्री अच्छाई देखते हैं और समाजवादी बुराई देखते हैं। हीगेल पर खुद को आधारित करते हुए प्रूदों अपने फार्मूले से खुद को बुर्जआ अर्थशास्त्र और समाजवाद दोनों से ऊपर उठा लेना चाहते हैं। पर वास्तव में वे दोनों से ही नीचे रहते हैं वास्तव में वे पेटी बुर्जुआ सोच से आगे नहीं बढ़ पाते।

प्रूदों ने अपना मत अपनी पुस्तक 'दरिद्रता का दर्शन' में प्रस्तुत किया। इसका जवाब मार्क्स ने 'दर्शन की दरिद्रता' पुस्तक लिखकर दिया। मार्क्स ने इस पुस्तक में बतलाया कि प्रूदों हीगेल के द्वन्द्ववाद का गलत इस्तेमाल करते हैं। ऐतिहासिक भौतिकवाद को प्रस्तुत करते हुए मार्क्स ने दिखाया कि प्रूदों का खुद को विभिन्न आर्थिक श्रेणियों पर आधारित करना गलत है। प्रूदों श्रम विभाजन व मशीनरी, प्रतियोगिता व एकाधिकार, किराया व भूमालिकाना, हड़ताल व मजदूर संगठन आदि आर्थिक श्रेणियों की बात करते हैं। मार्क्स ने बताया कि श्रम विभाजन कोई आर्थिक श्रेणी नहीं है बल्कि ऐतिहासिक श्रेणी है जो समाज विकास की विभिन्न अवस्थाओं  में विभिन्न रूप लेता है। इसी तरह फैक्टरी का विकास मजदूरों के आपसी समझौते से उस्तादों के अधिकार में नहीं हुआ ( जैसा प्रूदों मानते हैं ) बल्कि व्यापारिक पूंजी ने आधुनिक वर्कशॉप पर कब्जा कर फैक्टरी स्थापित की। अंत में मार्क्स यूनियन व हड़ताल के महत्व को बताते हैं जिन्हें प्रूदों हमेशा खारिज करते हैं।

प्रथम इंटरनेशनल में मार्क्स-एंगेल्स लगातार गलत विचारों से संघर्षरत रहे। उन्होंने उस समय अराजकतावादी बाकूनिन, ब्लांकीपंथियों और अवसरवादी लासाल से मुख्यतया संघर्ष किया।

अराजकतावादी बाकूनिन का मानना था कि मजदूर वर्ग का मुख्य काम बगावत कर मौजूदा राज्य का खात्मा है। इस खात्मे के बाद कोई नया राज्य कायम नहीं होगा बल्कि राज्य की जगह लोगों के छोटे-छोटे स्वतंत्र संघ ले लेंगे। चूंकि राज्य को षड्यंत्र के जरिये खत्म किया जा सकता है इसलिए सर्वहारा वर्ग के किसी बड़े जनाधार वाले संगठन की जरूरत नहीं है। अराजकतावादी किसी भी तरह की राजनैतिक कार्यवाहियों की जरूरत से इन्कार करते हैं।

मार्क्सवाद का मत इसके उलट है। वह न केवल सर्वहारा की मजबूत अनुशासित पार्टी की जरूरत पर बल देता है बल्कि सर्वहारा को लामबंद करने के लिए आर्थिक व राजनैतिक संघर्ष दोनों पर बल देता है। मार्क्सवाद के अनुसार सर्वहारा वर्ग बुर्जुआ राजसत्ता का अंत कर सर्वहारा तानाशाही पर आधारित अपनी राजसत्ता कायम करेगा। समाजवादी राज्य एक प्रक्रिया में तिरोहित हो जायेगा।

बाकूनिन के अनुयायियों की प्रथम इंटरनेशनल में मजबूत स्थिति थी 1872 में बाकूनिन के अनुयायियों ने हेग कांग्रेस में फूट डाल कर खुद को इंटरनेशनल से अलग कर लिया। 19वीं शताब्दी के मजदूर आंदोलन पर अराजकतावादियों का अच्छा खास प्रभाव था। वे परिस्थितियों का ध्यान दिये बगैर हर वक्त क्रांति संभव है, मानते थे। इनका प्रभाव स्पेन, इटली सरीखे देशों में ज्यादा था जहां पेटी बुर्जुआ तत्वों की मजदूर वर्ग में अच्छी खासी उपस्थिति थी। पेटी बुर्जुआ तत्वों को इनकी तुरत फुरत क्रांति की बातें सहज ही आकर्षित करती थीं। 1870 के बाद से इनका सांगठनिक प्रभाव घटना शुरू हो गया और ये कई छोटे-छोटे संगठनों में बंट गये।

ब्लांकी फ्रांसीसी मजदूर नेता थे जिन्होंने 1848 की क्रांति और पेरिस कम्यून दोनों में हिस्सा लिया। ब्लांकीपंथियों का मूल दृष्टिकोण यह था कि अपेक्षाकृत थोड़े से दृढ़संकल्प और सुसंगठित लोग अनुकूल अवसर पर न केवल राज्य की बागडोर अपनी मुट्ठी में कर सकते हैं, बल्कि जबरदस्त और निष्ठुर शक्ति का प्रदर्शन करते हुए तब तक सत्ता अपने हाथ में रख सकते हैं जब तक वे आम जनता को क्रांति में खींच लाने तथा उन्हें नेताओं के एक छोटे दल के चारों ओर पंक्तिबद्ध करने में सफल नहीं होते। उनका मानना था कि क्रांतिकारी सरकार के हाथ में सत्ता कठोरता के साथ केन्द्रीयकृत होनी चाहिए। पेरिस कम्यून के बाद ब्लांकीपंथ भी तेजी से क्षरित हो गया।

मार्क्स एंगेल्स ने प्रथम इंटरनेशनल में बाकूनिन व ब्लांकी के खिलाफ सतत् संघर्ष किया। पर इन दोनों को अन्ततः पेरिस कम्यून के अनुभव ने ही व्यवहारतः गलत साबित किया। ब्लांकीपंथी कम्यून में बहुमत में थे तो प्रूदोंपंथी अल्पमत में। प्रूदों के अनुयायी बाकूनिनपंथी मजदूरों के संघ बनाने के विरोधी थे प्रूदों तो इन संघों को मजदूरों की स्वतंत्रता के लिए बंधन तक मानते थे। पर जब पेरिस कम्यून कायम हुआ तो कम्यून ने उद्योगों के मजदूरों का न केवल संघ कायम किया बल्कि वह इन संघों को एक बड़ी यूनियन में संयुक्त करने की ओर भी बढ़ा। यानी कम्यून प्रूदों के मत की उलटी दिशा में बढ़ा। ब्लांकीपंथी आशा के विपरीत कम्यून ने अपनी घोषणा में पेरिस के साथ सभी फ्रांसीसी कम्यूनों का स्वतंत्र संघ बनाने की बात कही। यानी केन्द्रीकृत सत्ता की ब्लांकीपंथी सोच के उलट दिशा में कम्यून आगे बढ़ा। साथ ही कम्यून ने दिखाया कि मजदूर वर्ग पुरानी राज्य मशीन से काम नहीं चला सकता।

लासाल के अवसरवादी मत का मानना था के सरकार द्वारा सब्सिडी प्राप्त कोऑपरेटिव धीरे धीरे पूंजीवाद को प्रतिस्थापित कर देंगे। उसने सार्विक मताधिकार की मांग उठायी क्योंकि उसकी सोच से इससे 90 प्रतिशत संसदीय सीटें मजदूरों के लिए सुनिश्चित हो जायेंगी जो अपनी कोऑपरेटिव को सब्सिडी दिलाना सुनिश्चित करेंगी। लासाल ने जर्मन चांसलर बिस्मार्क से अवसरवादी सम्बन्ध बनाना इस उम्मीद से शुरू कर दिया कि इससे सब्सिडी मिलने में मदद मिलेगी। लासाल के अवसरवाद की सबसे खतरनाक बात यह थी कि यह ट्रेड यूनियन संघर्षों व हड़तालों का विरोधी था। इसका विरोध वह 'मजदूरी के लौह नियम' के आधार पर करता था। जिसके अनुसार मजदूर केवल गुजारा करने लायक हालत में रहने को विवश हैं क्योंकि मजदूरी में वृद्धि तत्काल महंगाई के रूप में सामने आती है और मजदूरी में हर वृद्धि खारिज हो जाती है।

मार्क्स ने 'मजदूरी के लौह नियम' की गलत अवधारणा के खिलाफ प्रथम इंटरनेशनल में 'मजदूरी दाम और मुनाफा' नामक रिपोर्ट प्रस्तुत की और बताया कि क्यों मजदूरों का अपने जीवन की बेहतरी के लिए यूनियनबद्ध होकर संघर्ष करना उचित है।

1875 में जब जर्मनी की मार्क्सवादी मत की पार्टी व लासालपंथी पार्टी की एकता कांग्रेस गोथा में हुई तो उसके लिए जो कार्यक्रम प्रस्तवित हुआ वह मार्क्सवाद की दृष्टि से भारी विचलन लिए था। मार्क्स ने गोथा कार्यक्रम की आलोचना लिखकर बताया कि यह कार्यक्रम गलत आर्थिक विश्लेषण पर आधारित है। राज्य के प्रति इसका दृष्टिकोण गलत है। यह लासाल के 'मजदूरी के लौह नियम' के आगे और उसके राज्य द्वारा सब्सिडी प्राप्त कोआपरेटिव के प्रति आत्मसमर्पण करता है। यह 8 घंटे कार्य दिवस की मांग नहीं उठाता। मार्क्स की आलोचना के बावजूद जर्मनी की पार्टी में अवसरवादी रुख इतना मजबूत था कि लिब्नेख्त सरीखे मार्क्सवादी कुछ ही संशोधन कार्यक्रम में करा पाये।

इसके साथ ही मार्क्स एंगेल्स यूरोप से लेकर अमेरिका हर जगह आंदोलन की गलत प्रवृत्तियों को चिह्नित करते रहे व उनके साथ संघर्ष करते रहे।

इस तरह मार्क्स जहां शुरू में समाजवाद की गैरवैज्ञानिक किस्मों के खिलाफ संघर्षरत रहे वहीं बाद में मजदूर आंदोलन की अवसरवादी व अराजकतावादी धारा के खिलाफ भी उन्होंने संघर्ष किया।

मार्क्स मजदूर वर्ग के महान क्रांतिकारी शिक्षक थे। उन्होंने एंगेल्स के साथ मिलकर मजदूर वर्ग की क्रांतिकारी विचारधारा मार्क्सवाद को सूत्रित किया। आजीवन वे मजदूर आंदोलन को सही वैज्ञानिक विचारधारा पर खड़ा करने के लिए संघर्षरत रहे। मजदूर वर्ग के क्रांतिकारी संघर्षों में उन्होंने हमेशा हिस्सा लिया व नेतृत्व किया। उनकी शिक्षायें उनकी मृत्यु के बाद भी दुनिया भर के मजदूर वर्ग को सही राह दिखाती रही हैं और हमेशा दिखाती रहेंगी।

■■■